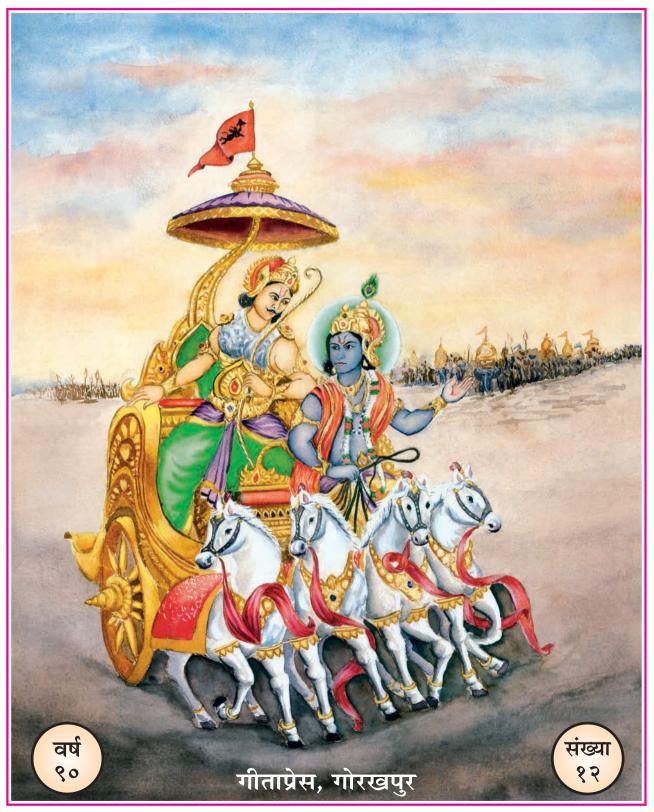
कल्याण



रथारूढ़ श्रीकृष्ण और अर्जुन

मत्त्य ८ रुपये





ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः। नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्ये नमोऽस्तु ते॥ नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्ये ते नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥

वर्ष १० गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, दिसम्बर २०१६ ई० पूर्ण संख्या १०८१

जय जय जय गणपति गणनायक!

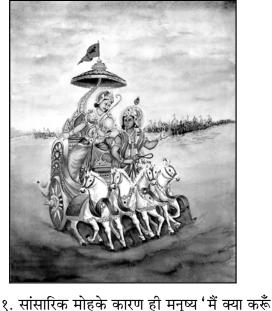
गणपति गणनायक! करुणासिन्धु, बन्धु जन-जनके, सिद्धि-सदन, सेवक-सुखदायक॥ अति, विघ्न-बिदारण, बोध-विधायक। कृष्णस्वरूप, अनूप-रूप सिद्धि-बुद्धि-सेवित, सुषमानिधि, नीति-प्रीति-पालक, वरदायक॥ भुवन-भय-वारण, वारन-वदन, विनायक-नायक। शंकर-सवन, निज-जन-मन-मोदक, गिरि-तनया-मन-मोद-प्रदायक॥ मोदकप्रिय, अमल, अकल अरु सकल-कलानिधि, रिद्धि-सिद्धिदायक, सुरनायक। ज्ञान-ध्यान-विज्ञान दान करि, निज-जन-मनवाञ्छित फल-दायक॥ सुरसेव्य एक-रद, प्रथम-पुज्य, सदा एकरस, खल-दल-शायक। बिद्या-बल-विवेक-वर-वारिधि, विश्ववन्द्य, विबुधाधिप-नायक॥ चरण-शरण-जन जानि दयानिधि! देहु एक यह वर वरदायक। * जन-जनमें हो नीति-प्रीति नित, रहे न कोउ विषय-विष-पायक॥

Hinduis Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE आगे मार्ग छोटे BY Avinash/Sha

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ (संस्करण २,१५,०००) कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, दिसम्बर २०१६ ई० विषय-सूची पुष्ठ-संख्या पुष्ठ-संख्या विषय विषय १- जय जय जय गणपति गणनायक! ३ १४- कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ (पं० श्रीजानकीनाथजी कौल 'कमल', एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर) २७ २– कल्याण ५ ३- श्रीकष्णद्वारा अर्जनको उपदिष्ट गीताका सार १५- माता सारिका देवी २८ [आवरणचित्र-परिचय] ६ १६- कैसे बनें भगवानके प्रेमी भक्त? (डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापित)...... २९ ४- मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ? (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ७ १७- प्रभो ! आपको कैसे प्रसन्न करें ? ५- भक्तकी बात (स्वामी श्रीभोलेबाबाजी)......९ [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] ६- मानव जीवनकी धन्यता (पुज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) . १० (आचार्य श्रीरामरंगजी)...... ३३ १८- डेंगू बुखारका आसान आयुर्वेदिक उपचार ७– भजनको आवश्यकता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) .. ११ (डॉ० श्रीदिलीपकुमारजी) ३४ १९- रामदास काठियाबाबा [संत-चरित] (श्रीरामलालजी) ३५ ८- '…ताहि बोउ तु फूल!' (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) १४ ९- साधकोंके प्रति— २०- साधनोपयोगी पत्र ३८ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) १७ २१- व्रतोत्सव-पर्व [माघमासके व्रतपर्व]४० २२- व्रतोत्सव-पर्व [फाल्ग्नामासके व्रतपर्व].....४१ १०- आदर्श कर्मठता [प्रेरक-प्रसंग]......१९ ११- उद्धार और अधोगति (श्रीबरजोरसिंहजी)...... २० २३- कृपानुभृति ४२ २४- पढो, समझो और करो ४३ १२- जय जय दशरथनन्दन!राम!! (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय') २१ २५- मनन करने योग्य ४६ २६- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक १३- मॉॅंकी कृपा (महात्मा श्रीश्रीसीतारामदास ॐकारनाथजी महाराज) २२ विषय-सूची ४७ चित्र-सूची ५- श्रीकुलवागीश्वरी देवी (इकरंगा) २८ १- रथारूढ श्रीकृष्ण और अर्जुन (रंगीन) ... आवरण-पृष्ठ २- भगवान् गणपति..... (") मुख-पृष्ठ ६ - संत श्रीरामदास काठियाबाबा (") ३५ ७- भगवान् श्रीकृष्ण और पौण्डुक (") ४६ ३- रथारूढ श्रीकृष्ण और अर्जुन (इकरंगा) ६ ४- श्रीशारिका देवी २७ जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥ जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥ एकवर्षीय शुल्क पंचवर्षीय शुल्क जगत्पते । गौरीपति विराट जय रमापते ॥ जय सजिल्द ₹२२० सजिल्द ₹११०० विदेशमें Air Mail) वार्षिक US\$ 50 (₹3000) Us Cheque Collection सजिल्द शुल्क पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000) Charges 6\$ Extra संस्थापक - ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक —राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित website: gitapress.org e-mail: kalyan@gitapress.org 09235400242/244 सदस्यता-शुल्क —व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें। Online सदस्यता-शुल्क -भुगतानहेतु-gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें। अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।

संख्या १२] कल्याण याद रखो — जो पुरुष भगवान्का होकर कामना और समझकर सुखका अनुभव करते हैं। अपेक्षाके फन्देसे निकल गया है, वही सदा सुखी है। उसकी याद रखो—जो भगवान्की कृपामें विश्वास शान्तिको भंग करे, ऐसा जगत्में कोई कारण नहीं है। करते हैं और भगवान्के ऊपर अपनेको छोड़ देते हैं, याद रखो-जिसको भगवानुकी कृपापर भरोसा वे इस बातकी ओर ताकते ही नहीं कि हमारी बडी है और उनके न्यायपर विश्वास है, उसको संसारकी हानि हो रही है। वे जानते हैं कि किसी परम लाभके कोई भी स्थिति विचलित नहीं कर सकती। लिये ही यह हानि हो रही है; क्योंकि मंगलमय भगवानुके विधानमें अमंगलके लिये गुंजाइश ही नहीं है। याद रखों—जो सांसारिक पदार्थोंकी कोई परवाह न करके केवल भगवानुसे ही प्रेम करता है, जगतुकी याद रखों — जो भगवान्में यथार्थ विश्वास रखते सारी वस्तुएँ और सारी परिस्थितियाँ स्वाभाविक ही हैं, उनका बीमा भगवानुके यहाँ हो जाता है। यहाँकी उसके कल्याणमें लग जाती हैं। बीमा-कम्पनियाँ तो फेल भी हो सकती हैं. पर वह याद रखो—जो भगवान्का अनन्य आश्रय लेकर बीमा लेनेवाला ऐसा पूर्ण है कि सब कुछ देनेपर भी निश्चिन्त हो रहा है, उसको अपने योग-क्षेमकी चिन्ता उसका फण्ड उतना-का-उतना अपार ही रहता है। वह जिसका बीमा ले लेता है, उसको सर्वत्र सर्वथा और कभी नहीं सताती। उसके लिये जो कुछ उचित, हितकर और आवश्यक होता है, भगवान् स्वयं ही उसकी रक्षा सर्वदाके लिये अभय कर देता है और यह बीमा हर साल बार-बार नहीं कराना पडता। जो एक बार सच्चे और पूर्तिकी व्यवस्था कर देते हैं। हृदयसे अपनेको श्रीभगवानुके चरणोंपर डालकर उनकी याद रखो-जिसकी आवश्यकताका पता भी सर्वज्ञ भगवान् लगाते हैं और उसकी ठीक समयपर पुरी शरण ले लेता है, उसका उसी क्षण सदाके लिये कभी मात्रामें पूर्तिकी व्यवस्था भी सर्वशक्तिमान् और परम Lapse (नष्ट) न होनेवाला अखण्ड बीमा हो जाता है। सृहृदु भगवान् ही करते हैं, उसकी यथार्थ आवश्यकताकी याद रखों — जो भगवच्चरणोंके शरणागत हो गया पूर्ति हुए बिना कभी रहती नहीं और अनावश्यक है, उसीका मानव-जन्म और मानव-जीवन सफल हुआ आवश्यकताका बोध उसको कभी सताता नहीं। है। भोगोंके आश्रय में पडा हुआ मनुष्य तो—जीवनकी याद रखो — जिसके योगक्षेमका भार भगवान्ने सफलता तो दूर—उलटे नरकोंमें तथा आसुरी योनियोंमें उठा लिया है, उसको कभी किसी प्रकारसे हानि जानेकी तैयारी कर रहा है। उसका जीवन व्यर्थ ही नहीं, बल्कि आनेवाले भयानक दु:खोंका महान् कारण है। होगी—यह तो मानना ही मूर्खता है। उसकी कभी कोई हानि होती दिखायी देगी तो वह किसीकी उस गन्दी याद रखो - जिसने भगवच्चरणोंका आश्रय ग्रहण और तुच्छ-सी झोंपड़ीको ढहाने-जैसी ही होगी, जो कर लिया है; वह स्वयं ही अपार दु:खसागरसे नहीं विशाल सुन्दर महल बनानेके लिये ढहायी जाती है। तरता—उसके साथ बातचीत करनेवाले, मिलनेवाले, याद रखो-जिसकी दृष्टि बहुत ही छोटी-सी उससे प्रेम करनेवाले, उसके सहवासमें रहनेवाले, उसके सीमामें बँधी रहती है, उसीको प्रत्यक्षवादी कहते हैं और मित्र-बान्धव-कुटुम्बी और सेवकतकके तरनेका साधन वही भविष्यके सुन्दर परिणामको न जाननेके कारण बन जाता है। बस, ऐसा ही पुरुष जगत्में धन्य है। वर्तमानमें दीखनेवाली कल्पित हानिसे भयभीत होकर उसीके माता-पिता धन्य हैं और वह भूमि भी धन्य है, शोकमें डूब जाता है। दूरदर्शी पुरुष भविष्यको देखते जिसमें ऐसा भगवच्चरणारविन्द-चंचरीक प्रेमी भक्त हैं और भविष्यके सुन्दर परिणामके लिये वर्तमानके पुरुष प्रकट हुआ। कष्टोंको सहर्ष स्वीकार करते हैं एवं उन्हें तपस्या 'शिव'

श्रीकृष्णद्वारा अर्जुनको उपदिष्ट गीताका सार



और क्या नहीं करूँ '-इस दुविधामें फँसकर कर्तव्यच्युत हो जाता है। अत: मोह या सुखासिकके वशीभूत नहीं होना चाहिये।

२. शरीर नाशवान् है और उसे जाननेवाला शरीरी

कर्तव्यका पालन करना-इन दोनोंमेंसे किसी भी एक उपायको काममें लानेसे चिन्ता-शोक मिट जाते हैं।

अविनाशी है—इस विवेकको महत्त्व देना और अपने

३. निष्कामभावपूर्वक केवल दूसरोंके हितके लिये अपने कर्तव्यका तत्परतासे पालन करनेमात्रसे कल्याण हो

जाता है।

४. कर्मबन्धनसे छूटनेके दो उपाय हैं - कर्मींके तत्त्वको जानकर नि:स्वार्थभावसे कर्म करना और तत्त्वज्ञानका

अनुभव करना। ५. मनुष्यको अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियोंके आनेपर सुखी-दुखी नहीं होना चाहिये; क्योंकि इनसे सुखी-दुखी

होनेवाला मनुष्य संसारसे ऊँचा उठकर परम आनन्दका अन्भव नहीं कर सकता।

६. किसी भी साधनसे अन्त:करणमें समता आनी चाहिये। समता आये बिना मनुष्य सर्वथा निर्विकल्प नहीं हो सकता।

सर्वश्रेष्ठ साधन है। ८. अन्तकालीन चिन्तनके अनुसार ही जीवकी गति

होती है। अतः मनुष्यको हरदम भगवान्का स्मरण करते

हुए अपने कर्तव्यका पालन करना चाहिये, जिससे अन्तकालमें भगवान्की स्मृति बनी रहे।

क्यों न हों।

मानकर भगवानुका ही चिन्तन करना चाहिये।

होता है।

१४. संसार-बन्धनसे छूटनेके लिये सत्त्व, रज और

मनुष्य इन तीनों गुणोंसे अतीत हो जाता है। १५. इस संसारका मूल आधार और अत्यन्त श्रेष्ठ परमपुरुष एक परमात्मा ही हैं—ऐसा मानकर अनन्यभावसे उनका भजन करना चाहिये।

योनियों एवं नरकोंमें जाता है और दु:ख पाता है। अत:

ही आरम्भ करना चाहिये।

१८. सब ग्रन्थोंका सार वेद हैं, वेदोंका सार उपनिषद्

शरणागति है। जो अनन्यभावसे भगवानुकी शरण हो जाता

९. सभी मनुष्य भगवत्प्राप्तिके अधिकारी हैं, चाहे वे किसी भी वर्ण, आश्रम, सम्प्रदाय, देश, वेश आदिके

१०. संसारमें जहाँ भी विलक्षणता, विशेषता, सुन्दरता, महत्ता, विद्वत्ता, बलवत्ता आदि दीखे, उसको भगवान्का ही

११. इस जगत्को भगवान्का ही स्वरूप मानकर प्रत्येक मनुष्य भगवान्के विराट्रूपके दर्शन कर सकता है।

१२. जो भक्त शरीर-इन्द्रियाँ-मन-बुद्धिसहित अपने-आपको भगवान्के अर्पण कर देता है, वह भगवान्को प्रिय

१३. संसारमें एक परमात्मतत्त्व ही जाननेयोग्य है। उसको जाननेपर अमरताकी प्राप्ति हो जाती है।

तम-इन तीनों गुणोंसे अतीत होना जरूरी है। अनन्यभक्तिसे

जन्म-मरणके चक्रसे छूटनेके लिये दुर्गुण-दुराचारोंका त्याग करना आवश्यक है। १७. मनुष्य श्रद्धापूर्वक जो भी शुभ कार्य करे,

१६. दुर्गुण-दुराचारोंसे ही मनुष्य चौरासी लाख

उसको भगवान्का स्मरण करके नामका उच्चारण करके

हैं, उपनिषदोंका सार गीता है और गीताका सार भगवान्की

है, उसे भगवान् सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर देते हैं।

७. सब कुछ भगवान् ही हैं—ऐसा स्वीकार कर लेना

मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ? संख्या १२] में कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ? (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) प्रत्येक मनुष्यको विचार करना चाहिये कि 'मैं कौन देखा था, अब वह मुझसे मिलता है तो मुझे पहचान नहीं हूँ' और 'मेरा क्या कर्तव्य है ?' मैं नाम, रूप—देह, इन्द्रिय, सकता। देहका रूप बदल गया। शरीर बढ़ गया, दाढ़ी-मन या बुद्धि हूँ या इनसे कोई भिन्न वस्तु हूँ ? विचारपूर्वक मूँछें आ गयीं। इससे वह नहीं पहचानता। किंतु मैं पहचानता निर्णय करनेसे यही बात ठहरती है कि मैं नाम नहीं हूँ, मुझे हूँ, मैं उससे कहता हूँ, आपका शरीर युवावस्थासे वृद्ध आज जयदयाल कहते हैं, परंतु जब प्रसव हुआ था, उस होनेके कारण उसमें कम अन्तर पड़ा है, इससे मैं आपको समय इसका नाम जयदयाल नहीं था। यद्यपि मैं मौजूद पहचानता हूँ। मैंने आपको अमुक जगह देखा था। उस था। घरवालोंने कुछ दिन बाद नामकरण किया। उन्होंने समय मैं बालक था, अब मेरे शरीरमें बहुत परिवर्तन हो उस समय जयदयाल नाम न रखकर महादयाल रखा होता गया, अत: आप मुझे नहीं पहचान सके। इससे यह सिद्ध होता है कि शरीर 'में' नहीं हूँ। 'शरीर में हूँ' ऐसा अभिमान तो आज मैं महादयाल कहलाता और अपनेको महादयाल ही समझता! मैं न पूर्वजन्ममें जयदयाल था, न गर्भमें भी पूर्वोक्त नामके समान ही सर्वथा भ्रमपूर्ण है। जो पुरुष जयदयाल था और न शरीरनाशके बाद जयदयाल रहूँगा। इस रहस्यको जानते हैं, वे शरीरके मानापमान और सुख-यह तो केवल घरवालोंका निर्देश किया हुआ सांकेतिक दु:खमें सर्वथा सम रहते हैं; क्योंकि वे इस बातको समझ जाते हैं कि मैं शरीरसे सर्वथा पृथक् हूँ। इसीलिये नाम है। यह नाम एक ऐसा कल्पित है कि जो चाहे जब बदला जा सकता है और उसीमें उसका अभिमान हो तत्त्ववेत्ताओंके लक्षणोंमें भगवान् कहते हैं-जाता है। जो विवेकवान् पुरुष इस रहस्यको समझ लेता है 'समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।' कि मैं नाम नहीं हूँ, वह नामकी निन्दा-स्तुतिसे कदापि (गीता १२।१८) **'मानापमानयोस्तुल्यः'** (गीता १४।२५) सुखी-दुखी नहीं होता। जब वह मनुष्य 'नाम' की निन्दा-स्तुतिमें सम नहीं है, निन्दा-स्तुतिमें सुखी-दुखी होता है **'समदुःखसुखः'** (गीता १४। २४) तब वह नाम न होनेपर भी 'नाम' बना बैठा है, जो सर्वथा अतएव विचार करनेसे यह प्रत्यक्ष सिद्ध होता है भ्रमपूर्ण है। जो इस रहस्यको जान लेता है, उसमें इस कि यह जड शरीर मैं नहीं हूँ, मैं इस शरीरका ज्ञाता हूँ; भ्रमकी गन्धमात्र भी नहीं रहती। इसीलिये श्रीभगवान्ने और प्रसिद्धि भी यही है कि शरीर 'मेरा' है। मनुष्य तत्त्ववेत्ता पुरुषोंके लक्षणोंको बतलाते हुए उन्हें निन्दा और भ्रमसे ही शरीरमें आत्माभिमान करके इसके मानापमान स्तुतिमें सम बतलाया है— और सुख-दु:खसे सुखी-दुखी होता है। इससे यह सिद्ध **'तुल्यनिन्दास्तुतिः'''''** (गीता १२।१९) हुआ कि मैं शरीर नहीं हूँ। **'तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः'** (गीता १४।२४) इसी तरह इन्द्रियाँ भी मैं नहीं हूँ। हाथ-पैरोंके कट फिर यह प्रसिद्ध भी है कि जयदयाल 'मेरा' नाम जाने, आँखें नष्ट हो जाने और कानोंके बहरे हो जानेपर है, 'मैं' जयदयाल नहीं हूँ। इससे यह सिद्ध हुआ नाम भी मैं ज्यों-का-त्यों पूर्ववत् रहता हूँ, मरता नहीं। यदि 'मैं' नहीं हूँ। मैं इन्द्रिय होता तो उनके विनाशमें मेरा विनाश होना इसी प्रकार रूप-देह भी मैं नहीं हूँ; क्योंकि देह सम्भव था। अतएव थोड़ा-सा भी विचार करनेपर यह जड है और मैं चेतन हूँ, देह क्षय, वृद्धि, उत्पत्ति और प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि मैं जड इन्द्रिय नहीं हूँ, वरं विनाशधर्मवाला है, मैं इनसे सर्वथा रहित हूँ। बालकपनमें इन्द्रियोंका द्रष्टा या ज्ञाता हूँ। देहका और ही स्वरूप था, युवापनमें दूसरा था और अब इसी प्रकार मैं मन भी नहीं हूँ। सुषुप्तिकालमें मन कुछ और ही है, किंतु मैं तीनों अवस्थाओंको जाननेवाला नहीं रहता, परंतु मैं रहता हूँ। इसीलिये जागनेके बाद मुझको तीनीमें duis का है। देशकी पुरुषन मुझकी बील्यावस्थामें वहुत बात MADE WITH LOVE BY Ayinash Sha

भाग ९० ज्ञाता हूँ। दूसरोंकी दृष्टिमें भी मनके अनुपस्थितिकालमें इस स्थितिकी प्राप्ति तत्त्वज्ञानसे होती है और वह तत्त्वज्ञान (सुषुप्ति या मूर्छित-अवस्थामें) मेरी जीवित सत्ता प्रसिद्ध विवेक, वैराग्य, विचार, सदाचार और सद्गुण आदिके है। मन विकारी है, इसमें भाँति-भाँतिके संकल्प-विकल्प सेवनसे होता है और इन सबका होना इस घोर कलिकालमें होते रहते हैं। मनमें होनेवाले इन सभी संकल्प-विकल्पोंका ईश्वरकी दयाके बिना सम्भव नहीं। यद्यपि ईश्वरकी दया मैं ज्ञाता हूँ। खान, पान, स्नान आदि करते समय यदि मन सम्पूर्ण जीवोंपर पूर्णरूपसे सदा-सर्वदा है, किंतु बिना उनकी दूसरी ओर चला जाता है तो उन कामोंमें कुछ भूल हो शरण हुए उस दयाके रहस्यको मनुष्य समझ नहीं सकता जाती है, फिर सचेत होनेपर मैं कहता हूँ, मेरा मन दूसरी एवं दयाके तत्त्वको समझे बिना उस दयाके द्वारा होनेवाले जगह चला गया था, इस कारण मुझसे भूल हो गयी; लाभको वह प्राप्त नहीं कर सकता। अतएव तत्त्वज्ञानकी क्योंकि मनके बिना केवल शरीर और इन्द्रियोंसे सावधानीपूर्वक प्राप्तिके लिये सब प्रकारसे ईश्वरके शरण होकर उनकी काम नहीं हो सकता। अतएव मन चंचल और चल है दयाके रहस्यको समझकर उससे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये। परंतु मैं स्थिर और अचल हूँ। मन कहीं भी रहे, कुछ भी ईश्वरकी शरणसे ही हमें परम शान्ति मिल सकती है। संकल्प-विकल्प करता रहे, मैं उसको जानता रहता हूँ, श्रीभगवान् कहते हैं— अतएव मैं मनका ज्ञाता हूँ, मन नहीं हूँ। शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत। इसी तरह मैं बुद्धि भी नहीं हूँ; क्योंकि बुद्धि भी तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ क्षय और वृद्धि-स्वभाववाली है। मैं क्षय-वृद्धिसे सर्वथा (गीता १८।६२) रहित हूँ। बुद्धिमें मन्दता, तीव्रता, पवित्रता, मलिनता, 'हे भारत! सब प्रकारसे उस परमेश्वरकी ही विकार, व्यभिचारादि होते हैं, परंतु मैं उसकी इन सब अनन्य शरणको प्राप्त हो, उस परमात्माकी कृपासे ही स्थितियोंको जाननेवाला हूँ। मैं कहता हूँ उस समय मेरी तू परम शान्ति और सनातन परम धामको प्राप्त होगा।' बुद्धि ठीक नहीं थी, अब ठीक है। बुद्धि कब क्या जब यह मनुष्य परमेश्वरके शरण* होकर परमेश्वर विचार रही है और क्या निर्णय कर रही है-इसको मैं तत्त्वको जान जाता है, तब उस परमेश्वरको कृपासे अज्ञान जानता हूँ। बुद्धि दृश्य है, मैं उसका द्रष्टा हूँ। अतएव नाश होकर वह परमेश्वरको प्राप्त हो जाता है। जैसे निद्राके बुद्धिका मुझसे पार्थक्य सिद्ध है, मैं बुद्धि नहीं हूँ। नाशसे मनुष्य जाग्रतुको, दर्पणके नाशसे प्रतिबिम्ब बिम्बको इस प्रकार मैं नाम, रूप-देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि तथा घटके फूटनेसे घटाकाश महाकाशको प्राप्त हो जाता प्रभृति नहीं हूँ। मैं इन सबसे सर्वथा अतीत, इनसे सर्वथा है, इसी प्रकार अज्ञानके नाशसे यह जीवात्मा विज्ञानानन्दघन पृथक्, चेतन, साक्षी, सबका ज्ञाता, सत्, नित्य, अविनाशी, परमात्माको प्राप्त हो जाता है। जब यह साधक नाम, अविकारी, अक्रिय, सनातन, अचल और समस्त सुख-रूप—देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदिसे अपनेको सर्वथा दु:खोंसे रहित केवल शुद्ध आनन्दमय आत्मा हूँ। यही पृथक् समझ लेता है, तब यह ईश्वरके शरण होकर ईश्वरकी मैं हूँ। यही मेरा सच्चा स्वरूप है। कृपासे, देहादि सम्बन्धसे होनेवाले समस्त क्लेशों और क्लेश, कर्म और सम्पूर्ण पापोंसे विमुक्त होकर परम पापोंसे सदाके लिये सर्वथा मुक्त हो जाता है एवं विज्ञानानन्दघन शान्ति और परमानन्दकी प्राप्तिके लिये ही मनुष्य-शरीरकी परमात्माका सनातन अंश होनेके कारण सदाके लिये उस प्राप्ति हुई है। इस परम शान्ति और परमानन्दको प्राप्त विज्ञानानन्दघन प्रभुको प्राप्त हो जाता है। प्रभुको प्राप्त करनेके लिये अनन्यभावसे इस प्रकार प्रयत्न करना और करना ही मनुष्यका एकमात्र कर्तव्य है। मनुष्य-शरीरके बिना अन्य किसी भी देहमें इसकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। प्रभुको प्राप्त हो जाना ही मनुष्यका परम कर्तव्य है। * शरणका सार अर्थ है—श्रद्धा और प्रेमपूर्वक निष्काम भावसे प्रभुकी आज्ञाका पालन करना, गुण और प्रभावसहित उनके स्वरूपका चिन्तन करना एवं हमारे कर्मोंके अनुसार परमेश्वरकृत सुख-दु:खादि विधानमें सर्वथा समचित्त रहना। शरणागतिका विशेष वर्णन देखना हो तो 'तत्त्वचिन्तामणि' [कोड 683] नामक गीताप्रेससे प्रकाशित पुस्तक देखनी चाहिये।

संख्या १२] भक्तक	ती बात ९		
\$	\$		
भक्तकी बात			
(स्वामी श्रीभ	गोलेबाबाजी)		
(१) संसार दु:खका भण्डार, निस्सार है, भगवद्-	(९) भगवान्की महिमा भागवतमें—भक्तमें दिन-		
भजन ही सार है, जिसने ईश्वरकी शरण ली, उसका	रात भासती है। सत्-शास्त्रका शुद्ध व्याख्यान भक्तका		
बेड़ा निश्चय होता पार है, जो ईश्वरसे विमुख हुआ, वह	कर्म है।		
जन्मता–मरता बारम्बार है!	(१०) ईश्वर दुर्विज्ञेय है, भक्तके देहद्वारा प्रकाशित		
(२) भगवान्के अर्चनसे, भगवन्नामके जपसे,	होता है, इसलिये सुभक्तोंका संग मुक्तिका देनेवाला है।		
भगवन्मूर्तिके ध्यानसे, भगवद्गुण-कीर्तनसे, हरिके स्मरणसे,	(११) भक्तका अपना-पराया नहीं होता, समस्त		
भगवान्की पुण्यकथाके श्रवणसे, भगवान्की वन्दना	वसुधा उसका कुटुम्ब है; क्योंकि सबमें वह एक अपने		
करनेसे, शिवके सेवनसे, भगवान्के चरणोदकका पान	आत्मा महाविष्णुको ही देखता है।		
करनेसे, भगवान्को निवेदन किया हुआ भोजन करनेसे,	(१२) धनसे क्लेश, मद, हिंसा उत्पन्न होती है		
भगवान्को सब कर्म अर्पण करनेसे, ईश्वरको आत्म-	और धर्मकी भी हानि होती है, इसलिये भक्त भवेश्वरसे		
निवेदन करनेसे, भक्तोंके पुण्य संसर्गसे, पुण्यतीर्थके सेवन	धन नहीं माँगता, केवल भक्ति ही माँगता है।		
करनेसे मनुष्योंकी भगवान्में भक्ति उत्पन्न होती है।	(१३) देह दु:खमय, दीनतामय, अशुद्ध और		
(३) जहाँ श्रीहरिका पूजन और शंकरका स्मरण	विनश्वर है, ऐसा समझकर भक्त जनार्दनसे देहके सुखके		
नहीं होता, वहाँ नित्य ही मनुष्य अपना सिर पीटते रहते	लिये प्रार्थना नहीं करता, ईश्वरकी भक्तिके लिये ही		
हैं, इसमें संशय नहीं है और जहाँ ये दोनों होते हैं, वहाँ	प्रार्थना करता है।		
सदा शान्ति निवास करती है।	(१४) कामसे वीर्य, धर्म, बुद्धि और सत्य सभीका		
(४) तभीतक जन्म–मरणरूप संसार है, जबतक	नाश होता है, इसलिये भक्त सर्व कामनाओंको त्यागकर		
मुक्ति नहीं होती और विश्वनाथमें प्रीति हुए बिना करोड़ों	भगवच्चरणोंमें ही प्रीति करता है।		
जन्मोंमें भी मुक्ति होना सम्भव नहीं।	(१५) भोग-सुखकी तो बात ही क्या है, सच्चा		
(५) जिनके चित्त काम-क्रोधसे अन्धे हो रहे हैं,	भक्त दुर्लभ कैवल्य-पदकी भी वाञ्छा नहीं करता, किंतु		
जो अज्ञानी और संशय-आत्मा हैं, उनमें ब्रह्माण्डको	भगवच्चरणाम्बुजकी दृढ़ भक्ति ही चाहता है।		
पवित्र करनेवाला प्रेम होना दुर्लभ है।	(१६) भक्त सर्वदा इस प्रकार भगवान्से प्रार्थना		
(६) जो विषयोंमें दोष देखता है और जगन्नाथमें	करता है—हे भगवन्! मेरी वाणी सर्वदा आपके पवित्र		
सुख, शान्ति एवं कल्याण देखता है, वह संसार-समुद्रसे	नामका कीर्तन करे, मेरे हाथ निरन्तर आपके पाद-		
शीघ्र ही पार हो जाता है।	कमलोंका सेवन करें, मेरे श्रोत्र नित्य आपके कथामृतका		
(७) उत्तम कुलमें जन्म, यज्ञ-सूत्र, विद्या और	पान करें, मेरा मन आपके शान्तिमय चरणोंका ही सदा		
दीक्षा निष्फल ही हैं, यदि मनुष्यकी आदि अव्यय पुरुष	स्मरण करे, मेरे हृदयाकाशमें कोटि सूर्यसम प्रभावाले		
विष्णुमें भक्ति न हो।	आप निवास करें, हे जनार्दन! जब मेरा चित्त आपके		
(८) भक्तोंका हृदय-क्षेत्र मुकुन्द भगवान्का प्रिय	चरणोंसे विमुख हो तब हे दयासागर! उसे अपने चरणोंमें		
मन्दिर है। भक्तोंके हृदयमें भगवान् लीला और विनोद	ही लगा लीजिये। हे महेश्वर! मैं सदा आपका ही ध्यान		
करते हैं।	करूँ, आपको ही सर्वत्र देखूँ, आपको ही नमस्कार करूँ,		

िभाग ९० रूप है, पूर्ण चैतन्य है, स्वप्रकाश है, चिदात्मक है, आनन्द ऐसा कीजिये। हे जगत्-बन्धो! आपको नमस्कार है। हे परमात्मन्! आपको नमस्कार है। हे विश्वेश्वर! आपको है, परमानन्द है, पूर्णानन्द है, महाशिव है, भूमानन्द, सदानन्द, नमस्कार है। हे देवादिदेव, हे परिपूर्णस्वरूप! आपको परानन्द, परात्पर है। ऐसे ध्यानसे सत्य-परावर ब्रह्मका साक्षात्कार होते ही सब कर्म छूट जाते हैं और समस्त नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है। (१७) ब्रह्म ही केवल सत्य है, जगत् मिथ्या है, ब्रह्म बन्धन टूट जाते हैं। ही मैं हूँ, मैं ही ब्रह्म है, ऐसा ज्ञान मुक्तिका देनेवाला है। (२१) सुख-दु:खमें जिसके मुखकी प्रभा नित्य (१८) ध्यानसे निर्मल अन्त:करणमें वैराग्य और एक-सी रहती है, जो आत्मामें तृप्त है, आत्मामें ही ज्ञान उत्पन्न होता है, इसलिये नित्य शुद्ध और निर्मल सन्तुष्ट है, आत्मामें ही क्रीडा करता है, आत्मामें ही रित करता है, निन्दा सुनकर जिसके मनमें क्षोभ नहीं आता मनकी अपेक्षा है। चाहे सगुण-साकारका ध्यान करे, चाहे निर्गुण-निराकारका ध्यान करे, अपने इष्टदेवको और प्रशंसा सुनकर जो हर्षित नहीं होता, वही भक्त है, परिच्छिन्न कभी न समझे। वहीं जीवन्मुक्त है, वहीं महात्मा है, वहीं सेवनीय और (१९) मनको निर्विषय करके परम अद्वय महाशम्भु पूजनीय है। देवका निरन्तर ध्यान करे। (२२) जो जाग्रत्-अवस्थामें सुप्तके समान बर्तता (२०) ऊपर पूर्ण है, नीचे पूर्ण है, मध्य पूर्ण है, है, सब दोषोंसे निर्मुक्त है, मरनेकी जिसको चिन्ता नहीं, सदात्मक है, सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है, पुरुष है, ब्रह्म है, विष्णु जीनेकी इच्छा नहीं, जो जगत्में जड नहीं देखता किंतु है, सर्वगत है, विभु है, अज है, सत्य है, ध्रुव है, नित्य है, सर्व चिन्मय देखता है, सदा ही जिसको ब्रह्मभाव है, वह शाश्वत है, सनातन है, निराकार है, निराधार है, निरालम्ब भक्त जीवन्मुक्त वसुधाको पवित्र करनेवाला है। ब्रह्मादि है, निराश्रय है, अविभक्त है, अखण्ड है, निष्कल है, निरंशक देवता भी उसको नमस्कार करते हैं। है, एकरूप है, सदा शान्त है, निर्भेद है, सुस्थिर है, सम है, (२३) जो सब तजता है, हरि भजता है, वह बिना इच्छा किये हुए भी मुक्त ही है, इसमें संशय नहीं है। धूमरहित अग्निके समान है, सर्वतेजोमय परम देव है, भा-मानव जीवनकी धन्यता (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) ए मन तुम गाओ गान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्। दिखता है भाव महान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम् ॥ * चाहे कितना दुःख सुख होवे, तू कर्मों से ना विमुख होवे। * निकले अन्तर से तान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम् ॥ ×

```
    चाह प्रिप्ता पु.खं सुख हाय, पू काम स मा विमुख हाया
    चिकले अन्तर से तान यही, हिरः शरणम् हिरः शरणम्॥
    रहना हो घर में या वन में, चिन्ता न रहे कोई मन में।
    है सहज सुलभ सद् ज्ञान यही, हिरः शरणम् हिरः शरणम्॥
    सुख साम्राज्य पाये तो क्या, या सर्वस खो जाये तो क्या।
    भक्तों को तो अभिमान यही, हिरः शरणम् हिरः शरणम्॥
    फल ये ही मानव जीवन का, सम्बन्ध छोड़ धन वैभव का।
    पा जाये परम स्थान यहीं, हिरः शरणम् हिरः शरणम्॥
```

मिलती इससे सच्ची सद्गति है, यह कितनी सुन्दर सम्मित है। बस रहे 'पथिक' का ध्यान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥ K

*

₩

K

₩

*

संख्या १२] भजनकी आवश्यकता भजनकी आवश्यकता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) जो सबसे बढकर प्रियतम हो, जो प्राणोंका आधार समय सर्वदा पवित्र-कोर्ति भगवान् श्रीकृष्णको अपने हो, जो जीवनका एकमात्र अवलम्बन हो, जिसकी स्मृति सामने देखकर नेत्रोंसे प्रेमके आँसू बहाती हुई गद्गद और मिलनकी आशा ही जीवनमें प्रतिपल चेतना प्रदान स्वरसे उनका गुण गाया करती हैं। करती हो, उसे क्षणभरके लिये भी कैसे भुलाया जा भगवान्को याद रखनेका उपदेश, घण्टे-दो-घण्टे सकता है ? कोई कहे कि दिन-रातमें दो घण्टे भले ही या अधिक नियमित कालके लिये नाम-जपकी आज्ञा. इतनी संख्या पूरी करनेपर सिद्धि हो जायगी, इस लोभसे उसे स्मरण कर लिया करो, शेष बाईस घण्टे घरके दूसरे आवश्यक कामोंमें खर्च किया करो, तो ऐसा करना उस संख्यायुक्त जप या संख्याकी गणनासे जप हो जाता है, प्रेमीके लिये कैसे सम्भव हो सकता है ? उसे कितने ही यों भूल रह जाना सम्भव है, इसलिये संख्याकी अवधि घण्टे कुछ भी काम क्यों न करना पड़े, वह करेगा अपने बाँधकर जप करना चाहिये—यह आदेश तो उन प्रियतमका स्मरण करते हुए ही। उसे वह क्षणभरके आरम्भिक साधकोंके लिये है, जो भगवानुके प्रेमी नहीं लिये भी अपने हृदय-मन्दिरसे अलग नहीं कर सकता। हैं; न करनेकी अपेक्षा ऐसा करना बहुत उत्तम है। प्रेम हृदयमें उसकी झाँकी सदा खुली रहेगी, वह उसके दर्शन प्राप्त होनेपर यह कहना नहीं पड़ता कि अमुक समयतक करता हुआ ही यन्त्रकी भाँति शरीरसे कार्य करता रहेगा। अमुक संख्यासे उन्हें याद किया करो। संख्या या ऐसे अनन्यचेता सतत और नित्य चिन्तनमें लगे रहनेवाले समयका हिसाब कौन रखे? जब एक क्षणभरके लिये प्रेमीको भगवान् नित्य प्राप्त ही रहते हैं, वे उसकी स्मृति चित्तसे नहीं हटती, तब हिसाब-किताबकी बात ही अन्तर्दृष्टिसे कभी ओझल हो ही नहीं सकते। इसी कहाँ रह जाती है ? श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामको सीताका सन्देश सुनाते हुए श्रीहनुमान्जी कहते हैं कि स्थितिको प्राप्त भक्त सूरदासने कहा था-'प्रभो! सीता प्राण-त्याग करना चाहती हैं, परंतु प्राण हाथ छुड़ाये जात हौ निबल जानिकै मोहिं। हिरदै तें जब जाहुगे सबल बदौंगो तोहिं॥ निकल नहीं पाते' सीताजीने कहा है-इसी तन्मयतामें लीन गोपियाँ प्रतिक्षण प्रत्येक कार्य नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट। करते समय प्रियतम श्यामसुन्दरके गुणगान करती हुई जाहिं केहिं आँसू बहाया करती थीं। भाग्यशालिनी व्रजांगनाओंकी प्राण कैद हो गये। आठों पहर आपके ध्यानके बड़ाई करते हुए भागवतकार भगवान् व्यास कहते हैं-किंवाड़ लगे रहते हैं। आपका ध्यान कभी छूटता नहीं, आपकी श्याम-तमाल माधुरी-मूर्ति कभी मनके नेत्रोंसे दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-परे होती ही नहीं। यदि कभी किंवाड़ खोले भी जायँ प्रेङ्केननार्भरुदितो क्षणमार्जनादौ। तो बाहर रात-दिन पहरा लगता है। पहरेदार कौन है? गायन्ति चैनमनुरक्तिधयोऽश्रुकण्ठ्यो रामनाम, क्षणभरके लिये राम-नाम लेनेसे जिह्ना विराम धन्या वजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः॥ उन श्रीकृष्णमें चित्तको अनुरक्त रखनेवाली नहीं लेती। प्राण कैसे निकलें? ऐसी स्थितिमें क्या व्रजवनिताओंको धन्य है, जो गौ दुहते, दिध-मंथन सीताको इस उपदेशकी अपेक्षा थी कि तुम अशोकवाटिकामें करते, घर लीपते, झुला झुलते, रोते हुए बालकोंको लोरी अकेली रहती हो, समय बहुत मिलता है, इसके सिवा

सुनीत, प्रांडु १६ते, iscard server https://dss.ga/dharma.limADE WIFH LANE BY र्रेश एमकी/अदि

िभाग ९० कल्याण श्रीभरतके वचन-कर लिया करो। यह उपदेश या तो अभक्तोंके लिये है या प्रेमहीन रँगरूटोंके लिये। मैं नाहिन तात उरिन तोही। प्रेमीजनोंको तो अपने प्रेमास्पदका नाम इतना प्यारा चरित मोही॥ अब प्रभु सुनावहु होता है कि स्वयं तो वे उसे कभी भूल ही नहीं सकते; माहीं। एहि संदेस सरिस जग दूसरेको कभी भूले-भटके उच्चारण करते सुन लेते हैं, करि बिचार देखेउँ नाहीं॥ कछ तो उसकी चरण-धूलि लेने दौड़ते हैं। प्रियतमका नाम भगवान् श्रीकृष्णका सन्देश लेकर जब उद्धवजी व्रजको लेनेवाला, प्रियतमका गुण गानेवाला, प्रियतमका प्रेमी, पधारे, तब श्रीकृष्णके-से वेषमें देखकर गोपियोंने उन्हें हृदयसे आदरका पात्र, प्रेमका पात्र न हो तो कौन होगा? घेर लिया और यह जानकर कि यह भगवान् श्रीकृष्णका प्रियतमका चिह्न ही हृदयमें हर्ष पैदा कर देता है। गोपियाँ सन्देश लेकर आये हैं, गोपियोंके हर्षका पार न रहा— श्याम मेघोंको देखकर श्रीकृष्णका स्मरण करती हुई तं प्रश्रयेणावनताः सुसत्कृतं मेघोंका दीर्घजीवन मनाती हैं। १ भरतजी श्रीरामके पदचिह्न सब्रीडहासेक्षणसूनृतादिभिः। और कुशशय्याके तृणोंको देखकर वहाँकी धृलिको और रहस्यपृच्छन् पविष्टमासने तृणोंको सिर-माथेपर चढ़ाने लगते हैं, रे श्रीराम सीताके विज्ञाय सन्देशहरं रमापते:॥ वस्त्रको हृदयसे लगाते हैं, ^३ महामुनि वसिष्ठ^४ और और उन्होंने विनयावनत होकर प्रेमभरी लज्जापूर्ण भरतजी^५ गुहको अपने रामका प्रिय सखा समझकर दृष्टिसे और मधुर वचनोंसे उनका सत्कार किया। उसपर रामके सदृश स्नेह और प्रेम दिखलाते हैं। सीता-जबतक भगवान् हमारे परम प्रेमास्पद नहीं हैं, सन्देश सुनानेवाले हनुमानुके प्रति श्रीराम और श्रीरामका तभीतक उनके स्मरण-चिन्तनका अभ्यास करना है, आगमनसंवाद सुनानेवाले हनुमान्के प्रति श्रीभरत ऐसी जिस शुभ घडीमें हम अपने-आपको उनके चरणोंपर कृतज्ञता प्रकट करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो न्योछावर कर देंगे, मन उनके मनमें मिला देंगे, फिर तो सकता। दोनों ही अपनेको हनुमान्का चिरऋणी घोषित हर घड़ी हमें उन्हींकी प्राणाधिक प्रिय छिब दिखलायी करते हैं-देगी: फिर गोपियोंकी भाँति कविवर 'देव' की भाषामें श्रीरामके वचन-हम भी यह कह सकेंगे-कपि तोहि समान उपकारी। जौ न जीमें प्रेम तो कीजै व्रत नेम, जब सुनु तनुधारी॥ कंजमुख भूलै तब संजम बिसेखिये। नहिं मुनि कोउ नर सुर आस नहीं पीकी, तब आसन ही बाँधियत, प्रति तोरा। करौं का उपकार सासनके साँसन को मूँदि पति पेखिये॥ होइ मोरा ॥ न सनमुख सकत में नखतें सिखालों सब श्याममयी बाम भईं तोहि नाहीं। सुनु उरिन

बाहर औ भीतर न दूजो देव लेखिये।

देखेउँ

करि

३. पट उर लाइ सोच अति कीन्हा।

बिचार

माहीं॥

१. श्यामघन जीवत रहौ सदाय। तुम्ह देखत घनश्याम हमारे मनमन्दिर प्रगटाय॥

कुस साँथरी निहारि सुहाई। कीन्ह प्रनामु प्रदिच्छिन जाई॥
 चरन रेख रज आँखिन्ह लाई। बनइ न कहत प्रीति अधिकाई॥

४. रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा। एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठ सम को जग माहीं। ५. भेंटत भरतु ताहि अति प्रीती। लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती॥

''''ताहि बोउ तू फूल!' (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) एक संतका पद है-अन्तमें निराश होकर नाथूसिंहने सोचा कि पुलिसके 'जो तोकूँ काँटा बुवै ताहि बोउ तू फूल!' बात बहुत छोटी-सी है, पर है बड़ी कठिन। कहा चंगुलसे छुटकारा मिलना मुश्किल है तो चलूँ, सारी

करते।

है किसीने— खुराफातकी जड़ रियासतके दीवानका ही खातमा कर दूँ—'न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी!' 'मधु पी लेते सभी मधुप बन, विषपान कठिन कितना दीवान बापना साहब रोज सबेरे एक घण्टे अपने

सचमुच, बहुत कठिन है नीलकण्ठ बनना। बगीचेमें जनताकी फरियादें सुनते। उनसे जो बनता, पर कठिन लाख हो, हम कोशिश करके नीलकण्ठ

बन सकते हैं, जरूर बन सकते हैं। लीजिये कुछ उदाहरण।

मारनेसे पहले मुझसे काम तो ले लो 'आखिर तुम चाहते क्या हो?' 'मुझे मारना है ? यह काम तो तुम कभी भी आकर

कर सकते हो। पर मुझे मारनेसे पहले मेरे लायक कोई काम हो तो वह मुझसे करा लो; फिर चाहे जब मार

डालना। मैं तो रोज सबेरे इसी बगीचेमें मिलता हूँ।'— सिरेमल बापनाने कहा। इतना सुनना था कि नाथूसिंहके हाथका रिवाल्वर

छूटकर धरतीपर जा गिरा। वह फुक्का फाड़-फाड़कर रोने लगा। उसने पैर

पकड़ लिये बापना साहबके।

सिरेमल बापनाने अपने जीवनके बयासी वर्षोंमेंसे इकतालीस वर्ष होल्कर, पटियाला, बीकानेर, रतलाम

एवं अलवर-जैसी देशी रियासतोंमें प्रधानमन्त्री या गृह मन्त्री-जैसे ऊँचे पदोंपर रहकर बिताये थे। इन दिनों वे इन्दौरमें थे। वहींके खडैल गाँवका पटेल था-नाथ्सिंह।

भाइयोंसे उसका झगड़ा हुआ। पुलिसने उसे कई

फौजदारी मुकदमोंमें फँसा दिया। एकसे छूट न पाता,

दूसरेमें पकड़ जाता।

सुनाओ।'

सुनायी। उसने बताया कि पुलिस किस तरह झूठे मुकदमे चलाकर उसे सता रही है। जीवनसे।'

फिर वह बोला—'मैं अब ऊब उठा हूँ इस

एक दिन नाथूसिंह सब फरियादियोंके पीछे जा

खड़ा हुआ। सबके चले जानेपर जब उसकी बारी आयी,

तब वह रिवाल्वर तानकर बापना साहबकी ओर बढ़ा।

हो ? तुम मुझे मारना चाहते हो तो चाहे जब मार

डालना। मैं रोज यहाँ मिलता हूँ। पर मुझे मारनेसे पहले,

मुझसे जो हो सकता है, वह काम तो मुझसे ले लो!'

रोते-रोते उसने बापना साहबके चरण पकड लिये।

अपना रूमाल निकालकर उसके आँसू पोंछे, उसका मुँह

पोंछा। फिर कहा—'तुम्हें जो तकलीफ हो, मुझे

बापना साहब न डरे, न घबराये, न झिझके।

उन्होंने बड़े प्रेमसे पूछा—'आखिर तुम चाहते क्या

नाथूसिंहका तना हुआ रिवाल्वर हाथसे छूट गया।

बापना साहबने उसे उठाकर गलेसे लगा लिया।

नाथूसिंहने अपनी मुसीबतकी सारी कहानी कह

बापना साहबने उसे ढाढस बँधाया और कहा— 'तुम सारी बातें लिखकर मुझे दे दो।'

संख्या १२]	ाहि बोउ तू फूल!' १५
********************************	**************************************
दूसरे दिन नाथूसिंहने सारी कहानी लिखकर	उन्हें पुलिसने उसकी पत्नीको गिरफ्तार कर लिया।
दे दी। उन्होंने सारी फाइलें तुरंत मँगवाकर	
मामलोंका निपटारा करा दिया।	मुकदमा चला तो छोटे भाईने हलफिया बयान
नाथूसिंहकी मुसीबतोंके सारे बादल छँट गर्	। दिया, उससे मुकदमेका रुख ही बदल गया। उसने
कसूर मेरा है, भाभीका नहीं	कहा—'मैं परीक्षामें फेल हो गया था, इससे आत्महत्या
कोई बीस साल पहलेकी घटना है हरियाणाके	एक करना चाहता था। मैंने ही कुछ इनाम देकर नौकरसे
नगरकी।	जहर मॅंगवाकर भोजनमें मिला लिया था। भाभीने एक
एक सम्पन्न परिवारमें चोरी हो गयी।	दिन गुस्सेमें नौकरको डाँट दिया, इसीसे उसने जहर देनेमें
कोई दो हजारका गहना चोरी चला गया।	भाभीका नाम ले लिया है। दर-असल कसूर मेरा है,
घरकी मालिकनने अफवाह उड़ा दी कि यह	चोरी भाभीका नहीं।'
उसके देवरकी करतूत है।	अदालतने भाभीको बरी कर दिया। देवरको छ:
उसके पतिने उसे लाख समझाया, पर वह	नहीं महीनेकी कैदकी सजा दे दी।
मानी।	देवरके त्याग, प्रेम और बलिदानने भाभीका हृदय
देवरसे उसकी पटती नहीं थी। चोरीके बहान	वह पलट दिया। वह रो पड़ी—फफक्-फफक्कर।
उसे घरसे निकलवा देना चाहती थी।	देवरके जेलसे छूटकर आनेपर भाभीका व्यवहार
पर ऐसा हो नहीं सका।	पहलेसे एकदम बदल गया। वह जी-जानसे देवरपर
बड़ा भाई मानता था कि उसके भाईका कोई	कसूर अपना स्नेह उडेलने लगी।
नहीं है।	उत ते वे फल देत
बादमें पुलिसने असली चोरोंको पकड़ लिया	और 'यह लो एबर्ट!'—कहते हुए एक लड़केने
माल भी बरामद कर लिया।	ब्लैकबोर्डका पोतना स्याही और खड़ियामें भिगोकर
पर भाभीका देवरके प्रति रुख न बदला र	गो न मास्टर एबर्टके मुँहपर फेंक मारा।
बदला।	पोतना एबर्टके कन्धेपर लगा। उनके चेहरेपर,
× × ×	उनकी सफेद कमीजपर स्याहीके धब्बे पड़ गये।
एक दिन देवर खाना खाते ही बेहोश हो	ाया। एबर्टने जेबसे रूमाल निकालकर अपना मुँह पोंछ
बड़ा भाई उसे अस्पताल ले गया।	डाला। उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा—'बच्चे, एक
जहरके लक्षण देखकर उसे उलटी आदि व	रायी शैतानी हो गयी, अब बस!'
गयी।	फिर उन्होंने धीरेसे कहा—'कमीज खराब हो
तत्काल उपचार होनेसे उसकी जान बच ग	यी। गयी!'
पर अस्पतालवालोंने पुलिसमें रिपोर्ट कर दी	। इतना कहकर वे लड़कोंकी कापियाँ जाँचने लगे।
उधर घरके नौकरने मालिकको बता दिया वि	ज 'मैं बच्चोंको सुलेख—खुशखती सिखाना उनका काम था।
ही मालिकनके कहनेपर जहर लाया था।'	× × ×
पुलिसकी जाँच आनेपर मालिकने कह दिय , Hinduism Discord Server https://dsc. , मुझ इस घटनाम अपनी पत्नीको हथि लगा देखित	िक यह घटना है सन् सत्तावनकी। १९५७ की नहीं, gydharma MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

१६ कल्प	गण [भाग ९०
<u> </u>	************************************
उन दिनों रूसमें एक फौजी स्कूल था। बड़े-बड़े	शरारती लड़केसे सबने कहा—'तुमने बड़ी धृष्टता
रईसों और जमीदारोंके लड़के उसमें पढ़ते थे। पास	की है।'
होनेपर ये ही लड़के रूसके सम्राट् जारके पार्षद बनते	एक लड़केने जोरसे चिल्लाकर कहा—'मास्टरजी
थे और सरकारी फौजके ऊँचे ओहदे सँभालते थे।	गरीब हैं। तुमने उनकी कमीज खराब कर दी। तुम्हें शर्म
प्रसिद्ध क्रान्तिकारी प्रिंस क्रोपाटिकन भी उन दिनों	आनी चाहिये।'
इसी स्कूलमें पढ़ते थे। बड़ी कोशिश-पैरवीके बाद उन्हें	शरारती लड़का तुरंत उठा। उसने एबर्टके पास
यहाँके पाँचवें दर्जेमें प्रवेश मिला था।	जाकर उनसे माफी माँगी।
एबर्ट—सीधा-सादा एबर्ट, गरीबीका मारा एक	उन्होंने धीरेसे कहा—'आपको सीखना चाहिये।'
अध्यापक था। बेचारेको किसी तरह यहाँ नौकरी मिल	× × ×
गयी थी।	दूसरे दिनसे सब विद्यार्थी शान्त हो गये।
दूसरे अध्यापकोंका तो लड़के कुछ सम्मान भी करते	एबर्टके व्यवहारने, उनकी उदारता और क्षमाने
थे, पर एबर्टके साथ वे अच्छा व्यवहार भी नहीं करते।	जादूका काम कर दिया।
दो–दो, तीन–तीन सालके फेलशुदा लड़कोंकी	सबमें मानो होड़-सी लग गयी कि हम अपने
शरारतका तो पार ही न रहता। वे लोग एबर्टको बहुत	खुश-खतसे मास्टरजीको खुश करेंगे।
सताते ।	क्रोपाटकिन अपने संस्मरणोंमें लिखते हैं कि 'एबर्ट
एबर्टने परिस्थितिसे मानो समझौता कर लिया	गुरुकी क्षमा और प्रेमका यह उदाहरण मुझे कभी नहीं
था—'एक दिनमें एक शैतानी!'	भूला।'
पर ढीठ लड़कोंको भला इतनेसे भी कहाँ संतोष!	'इत ते वे पाहन हनें, उत ते वे फल देत!'
× × ×	× × ×
उस दिन जब एबर्टको पोतना खींचकर मारा गया	प्यार करनेवालेसे प्रेम करना आसान है।
तो शैतानीकी हद हो गयी। लड़के सोचने लगे कि आज	भलाई करनेवालेके साथ भलाई करना आसान है।
तो एबर्ट निश्चय ही प्रिंसिपलके पास जाकर शिकायत	पर वैर-विरोध करनेवालेके साथ प्रेम करना, बुराई
करेंगे।	करनेवालेके साथ भलाई करना कठिन है। उसीमें
पर एबर्टने ऐसा कुछ नहीं किया।	कसौटी है—हमारी इंसानियतकी, हमारी मनुष्यताकी।
यह देखकर लड़के सब सन्न रह गये।	धन्य है वह मानव, जो वैरका बदला प्रेमसे और
सबको इस खोटी करनीपर शर्म आयी।	बुराईका बदला भलाईसे देता है; काँटोंके बदलेमें फूल
क्रोध और घृणापर प्रेमका मलहम लगाते देख	बिखेरता है और विषके बदलेमें अमृत ढुलकाता है।
कक्षाके सभी विद्यार्थी एबर्ट के पक्षमें हो गये।	काश, हम इस कसौटीपर खरे उतर सकें!
────────────────────────────────────	

साधकोंके प्रति— संख्या १२] साधकोंके प्रति-[गतिशील संसार] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः। केवल 'जाना' मात्र ही सत्य है, अन्य कुछ नहीं। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी कहते हैं-अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं । मोह मूल परमारथु नाहीं।। (गीता २।१८) श्रीमद्भगवद्गीता मनुष्यमात्रके अनुभवकी बात कहती (रा०च०मा० २।९२।८) है कि प्रत्येक वस्तु और व्यक्ति प्रतिक्षण विनाशकी ओर जो संसार प्रतिक्षण नष्ट हो रहा है, उसकी आशा जा रहे हैं। यदि मनुष्य इस ओर ध्यान दे तो महान् लाभ रखना मूर्खता नहीं तो और क्या है ? फिर भी हम नयी-हो सकता है। शिशुके जन्म लेनेके बादसे लोगोंकी नयी आशाएँ रखते हैं। क्या आशा रखनेसे इच्छित वस्तुएँ यही दृष्टि रहती है कि यह बड़ा हो रहा है, परंतु एवं परिस्थितियाँ प्राप्त हो जायँगी ? और यदि प्राप्त हो भी गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो स्पष्टत: वह प्रतिक्षण छोटा गयीं तो क्या स्थिर रह सकेंगी ? यह असम्भव है; क्योंकि ही होता जा रहा है। मान लीजिये कि किसीकी आयु स्थिर रहनेका तो उनका स्वभाव ही नहीं है। थोडा विचार करें, यदि हमारी वर्तमान परिस्थिति नहीं बदलेगी तो नयी सौ वर्षकी ही है और अबतक वह एक वर्षका हो चुका कैसे मिल सकेगी ? नयी मिलनेका अर्थ ही है—वर्तमान तो वास्तवमें अब वह निन्यानबे वर्षका ही है। आज किसी व्यक्तिका देहावसान हो जाता है तो हम कहते हैं कि परिस्थितिका विनाश होना। अत: जिस प्रकार यह नष्ट हो अमुक व्यक्ति आज मर गया, पर वास्तवमें तो वह प्रतिक्षण गयी, उसी प्रकार नयी परिस्थितिका भी विनाश अनिवार्य मर रहा था, मरते-मरते आज उसका मरना पूरा हो गया— है। इसलिये जो मनुष्य सांसारिक पदार्थींकी उत्पत्ति, स्थिरता उसके देहका अवसान हो गया। अथवा प्राप्तिकी आशा लगाये रहते हैं, उन लोगोंके लिये भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं—

मर रहा था, मरते-मरते आज उसका मरना पूरा हो गया—
उसके देहका अवसान हो गया।
अभी हम सब लोग यहाँ सत्संगमें आये हुए हैं।
जबसे हमलोग अपने स्थानसे चले हैं, तबसे अबतक जो
समय बीत गया, उतने कालतक हम सब मर चुके और
अभी भी मर रहे हैं, प्रतिक्षण आयु घट रही है। इस
प्रकार एक दिन हमारा यह बोलना न बोलनेमें, सुनना
न सुननेमें, रहना न रहनेमें एवं जीवित रहना मरनेमें

अवश्य बदल जायगा। इसे कोई बड़ा-से-बड़ा वैज्ञानिक भी नहीं रोक सकता। हमलोगोंकी आजतककी अवस्थाएँ— बालकपन, जवानी एवं स्वास्थ्य आदि जो चली गयीं, क्या वे हमें अब वापस मिलेंगी? कदापि नहीं। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु प्रतिक्षण विनाशकी ओर जा रही है। कोई भी ऐसी वस्तु दिखायी नहीं देती, जो स्थिर हो। संत कबीरजीके शब्द हैं— प्रतिक्षण नष्ट होनेवाली वस्तुओंकी आशा कैसी? संसारकी आशा ही परम दुःख और इससे निराश हो जाना ही परम सुख है— आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम्। (श्रीमद्भा० ११।८।४४) जो संसार देखते-देखते ही नष्ट हो रहा है, उसकी

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।

राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥

'उनकी आशा, उनके कर्म एवं उनका ज्ञान—सब

(गीता ९।१२)

संत कबीरजीके शब्द हैं— ओरसे दृष्टि हटाकर जो रह रहा है और नित्य है, उस का माँगूँ कछु थिर न रहाई। देखत नैण चल्यौ जग जाई॥ परमात्मतत्त्वकी ओर देखना ही यथार्थ दृष्टि है। विचार यह जो कुछ दीखता है, जितना दीखता है, सब करना चाहिये, जो प्रतिक्षण नष्ट हो रहा है, वह टिकेगा प्रतिक्षण बह रहा है—नष्ट हो रहा है। इस जगत्में कैसे? ये शरीर, परिस्थिति, मान-बड़ाई, आदर-सत्कार

निष्फल है।'

भाग ९० आदि क्या सदा रह सकेंगे? मनुष्य इनके रहनेकी ही दूसरी ओर यदि परमात्माकी आशा करें तो अवश्य ही नहीं, अधिकाधिक मिलनेकी भी आशा लगाये रहता है, परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति होगी; क्योंकि वे नित्य और परंतु जो एक क्षण भी स्थिर नहीं रहतीं, वे क्या मिलेंगी अविनाशी हैं। संसारकी प्राप्ति कठिन ही नहीं, नितान्त और क्या स्थिर रहेंगी? यदि मनुष्य इस सत्यकी ओर असम्भव है। भला, कहीं मृग-मरीचिकासे जलकी प्राप्ति ध्यान दे तो सचमुच कृतकृत्य हो जाय। बस, एक बार सम्भव है ? जो एक क्षण भी स्थिर नहीं, उसकी प्राप्ति इसे ठीक-ठीक समझ लिया जाय तो यह स्वत: ही सब कैसी? अत: आशा केवल परमात्माकी ही रखनी समय दिखायी देने लगेगा-स्मृति-पटलपर निरन्तर चाहिये। यदि स्थिरचित्त होकर विचार करें तो वे अंकित रहेगा। परमात्मा सबको सब समय, स्वतः ही प्राप्त हैं। हमने सूर्य उदय होता है तो उसका अस्त होना भी अप्राप्त संसारको प्राप्त मान लिया है, इसलिये हमें नित्य-प्राप्त परमात्मामें अप्राप्तिका भ्रम हो गया है। यह निश्चित है, इसमें किसीको किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं है; किंतु सूर्यास्त होनेपर क्या हमें दु:ख होता है ? यद्यपि अटल सिद्धान्त है, ठीक ज्यों-का-त्यों इसे देखना है, अँधेरा होनेपर हमारे दैनिक कार्योंमें बाधा आती है इसके लिये कोई नया ज्ञान अथवा अनुसंधान नहीं करना है। इसमें क्या बाधा है? थोड़ी गम्भीरतासे विचार करें तथापि हमें दु:ख या जलन नहीं होती। इसमें मूल कारण हमारी यह धारणा ही तो है कि जब सूर्य उदय हुआ तो पता लग जायगा कि यह कितनी सरल बात है। है तो वह अस्त भी अवश्य ही होगा। ठीक, इसी प्रकार इसे एक दृष्टान्तद्वारा समझिये—गंगातटसे थोड़ी ही दूर मार्गकी एक प्याऊपर एक परोपकारी व्यक्ति संसारकी वस्तुएँ अविराम अस्तकी ओर जा रही हैं, यदि यात्रियोंको जल पिला रहा है। लोग चलते-चलते हम इस सत्यको स्वीकार कर लें—सचाईसे मान लें तो रुककर जल पीते हैं, तदनन्तर फिर चलने लगते हैं। वह फिर प्रिय-से-प्रिय वस्तुके वियोगमें भी हमें दु:ख नहीं होगा। व्यक्ति प्रत्येकको जल पिलाता है, उसका किसीके साथ न पहलेसे सम्बन्ध है और न जल पिलानेके बाद ही और भगवान् श्रीकृष्ण भी अर्जुनको इसी अनित्यताके न वह किसीसे कुछ आशा ही रखता है, उसे तो जल विषयमें समझाते हुए कहते हैं-पिलानेमात्रसे ही प्रयोजन है। उपर्युक्त दृष्टान्त मनुष्यमात्रके आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥ कर्तव्यका दिग्दर्शन कराता है। संसारके जीवमात्र ही (गीता ५।२२) 'ये सभी पदार्थ आदि-अन्तवाले हैं, अनित्य हैं, यात्री हैं और हम लोग जल पिलानेवालेकी तरह हैं। अनवरत विनाशकी ओर तेजीसे गतिशील हैं, इनमें हमलोगोंके पास तन, मन, धन, विद्या, बुद्धि, पद एवं अधिकार आदि जो कुछ भी है, वह जल है, जो प्रतिक्षण बुद्धिमान् — विवेकी पुरुष नहीं रमता।' बहता है, जिसका धर्म ही बहना है। हमलोगोंका तो दिन दिन छाँड्या जात है तासों किसा सनेह। जो क्षणमात्र भी ठहरते नहीं, उनसे प्रेम कैसे करें? यही कर्तव्य है कि इस जलको रात-दिन बहनेवाले इनके जानेमें कुछ भी समय नहीं लगता, तब इनसे प्रीति संसारकी सेवामें लगा दें। इन बहती हुई वस्तुओंसे कैसे निभेगी? ये कुछ देर ठहरें, तब तो प्रीति हो! अविरत बहनेवाले संसारकी सेवा कर देना ही तो कर्मयोग है। राजस्थानी भाषामें एक कहावत है— हम आशा रखते हैं इस संसारकी, जो वस्तुत: है ही नहीं और निराश रहते हैं उन परमात्मासे, जो नित्य बाई रा फूल बाई रे ही चढ़ा देवे। और अविनाशी हैं—यही महान् भूल है। थोडा विचार आशय यह है कि जो वस्तु जिसके निमित्त है, वह करें—संसारकी आशासे क्या मिलेगा? इससे आयु तो उसीको अर्पित कर दी गयी। इस प्रकार संसारकी बहती व्यर्थ नष्ट हो जायगी और मिलेगा केवल धोखा, परंतु हुई वस्तुओंको बहते हुए जीवोंकी सेवामें लगा देनेसे जो

संख्या १२] आदर्श कर्मठता नित्य, अविनाशी तत्त्व है, वह स्वाभाविक ही बच रहेगा; मत करो। श्रीगोस्वामीजीने तो दूसरी आशा और भरोसेको क्योंकि उसका विनाश करनेमें कोई समर्थ नहीं है-ही जडता बताया है— विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति॥ यह बिनती रघुबीर गुसाँई। और आस-बिस्वास-भरोसो हरो जीव जड़ताई॥ (गीता २।१७) घरका हो अथवा बाहरका, बुढा हो या जवान, (विनयपत्रिका १०३) छोटा हो या बडा, स्वस्थ हो या अस्वस्थ, अभी जन्मा विचार करनेसे जडता स्पष्ट दिखायी देती है और यह नियम है कि जब वह स्पष्ट रूपसे दीखने लगती हो या मृत्य-शय्यापर पडा हो-कोई भी क्यों न हो, हमारा उद्देश्य तो केवल उसकी सेवा करना है, उससे है तो टिक नहीं सकती: क्योंकि जब वह है ही असत्य तो टिकेगी कैसे? कुछ लेना नहीं— कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।' मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते सङ्घोऽस्त्वकर्मणि॥ (गीता २।१६) यदि आज इस बातको समझ लिया जाय कि (गीता २।४७) हमारा कर्म करनेमें ही अधिकार है, फलमें कभी संसारमें तो केवल जाना-ही-जाना है—'सम्यग्री-त्यासरतीति संसार:', इसमें सत्य है तो केवल सेवा ही नहीं। है तो यह धारणा सदाके लिये स्थिर हो जायगी। इसके अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते॥ लिये कोई नयी बात याद नहीं करनी है, कोई नया (गीता ५।१२) फलमें आसक्त हुए कि बन्धनमें पड़े। इसलिये यही विचार नहीं करना है, केवल इस प्रत्यक्ष एवं सन्देहरहित बात युक्तिसंगत है कि कर्म तो करो, किंतु फलकी आशा तथ्यको स्वीकारमात्र कर लेना है। ———आदर्श कर्मठता[.] प्रेरक-प्रसंग एक अमेरिकन फर्मने जापानमें अपना व्यापार आरम्भ किया और अपने कार्यालयमें काम करनेके लिये उसने जापानके ही लोगोंको नियुक्त किया। साधारणतया अमेरिकाके कार्यालयोंमें कामके पाँच ही दिन होते हैं, शनिवार और रविवारको अवकाश रहता है। अमेरिकाकी इस फर्मने जापानमें भी वही नीति-रीति चलायी। सोमवारसे शुक्रवारतक काम तथा शनिवार एवं रविवारको अवकाश। फर्मके सभी जापानी कर्मचारियोंने इसका विरोध किया। यह बात सभीको आश्चर्यमें डालनेवाली थी। विरोधका कारण समझमें न आया। अन्तमें कर्मचारियोंसे पूछा गया—'आपलोगोंको क्या कष्ट है?' जानते हैं, इसका उत्तर क्या दिया गया? उन लोगोंने कहा—'हमें दो छुट्टियाँ नहीं चाहिये, हमारे लिये एक ही छुट्टी पर्याप्त है।' कारण क्या बताया—यह भी सुनिये। 'यहाँकी जनता मानती है कि अधिक छुट्टियोंसे हम आलसी बन जायँगे, परिश्रम करनेमें हमारा मन न लगेगा और इससे भी अधिक हानि तो यह है कि छुट्टीके दिन हमलोग और दिनोंकी अपेक्षा व्यय भी अधिक करते हैं। जो छुट्टी हमें आर्थिक बोझसे दबा दे और मानसिक दासता बढ़ा दे, वह हमारे जीवनमें नहीं खप सकती।' कैसी स्वस्थ मनःस्थिति है। वस्तुतः ऐसी ही मनःस्थिति देश तथा उसकी प्रजाको ऊँचा उठा सकती है। श्रमका जीवनके साथ गहरा सम्बन्ध है। इस प्रजाने श्रम करके जगत्के दूसरे देशोंको बदला दिया कि कैसे टूटे-फूटे खण्डहरोंको भव्य प्रासादोंमें परिवर्तित किया जा सकता है। Hin तामकास्थात र महत्ते प्रति हस्पके त्यासक स्थापक हो वस्पके त्यासक स्थापक स्यापक स्थापक स्यापक स्थापक स्य

उद्धार और अधोगति (श्रीबरजोरसिंहजी) श्रीभगवान् कहते हैं कि मेरेमें ही मनवाला हो जा। जीव अज्ञानवश अनादिकालसे इस दु:खमय संसार-सागरमें गोते लगाता रहा है और नाना प्रकारकी भली-बुरी सिवाय मेरे दूसरा भाव मनमें न आने पाये। मेरा अनन्य योनियोंमें भटकता हुआ भाँति-भाँतिके भयानक कष्ट सहता भक्त हो जा, मेरे अनवरत चिन्तनमें लग, मुझे हर रहता है। जीवकी इस दीन दशाको देखकर श्रीभगवान् समय—मृत्युकालपर्यन्त मेरा ही स्मरण किया कर, श्रद्धासहित मेरा ही निरन्तर पूजन किया कर और मुझे साधनोपयोगी देवदुर्लभ मनुष्य शरीर देकर एक अवसर देते हैं, जिससे वह चाहे तो साधनाके द्वारा एक ही जन्ममें नमस्कार किया कर-इस प्रकार चित्तको मुझमें लगा दे, मेरी शरण होकर आत्माको मुझमें एकीभावसे स्थितकर संसार-समुद्रसे निकलकर परमानन्दस्वरूप परमात्माको प्राप्त कर सकता है। श्रीभगवान्ने श्रीगीताजीमें अपने द्वारा अपना तू मुझे ही प्राप्त होगा अर्थात् तेरा उद्धार हो जायगा। उद्धार करनेकी बात कहकर जीवको यह आश्वासन दिया श्रीभगवान् गीता (१०।१०)-में कहते हैं कि निरन्तर जो मेरे ध्यानमें लगे हैं, उन्हें मैं बुद्धियोग देता है कि तुम यह न समझो कि तुम्हारा प्रारब्ध बुरा है, इसलिये तुम्हारी उन्नति होगी ही नहीं। तुम्हारा उत्थान-पतन प्रारब्धके हूँ। तत्त्वके यथार्थ ज्ञानका नाम बुद्धि है। उस बुद्धिसे अधीन नहीं है, तुम्हारा उत्थान तुम्हारे ही हाथमें है, अविवेकजन्य मोहरूपी अन्धकारको मैं विवेक-बुद्धिरूप

साधना करो और अपना उद्धार करो। भगवान् गीता (९।३०)-में कहते हैं-अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्। साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥ गीताके पढनेवालेका धीरे-धीरे उद्धार होने लगता है, इस बातमें जरा भी सन्देह नहीं करना चाहिये। भगवान् कहते हैं कि केवल सदाचारी और साधारण पापियोंका मेरा भजन करनेसे या मेरी राहमें चलनेसे उद्धार हो जाय

तो यह विशेष बात नहीं है। दुराचारी मनुष्य विषयों और पापोंमें आसक्त रहनेके कारण मेरा भजन नहीं करते, पर जब दुराचारीके पूर्वजन्मके शुभ संस्कारोंकी जागृति हो जाती है-शास्त्रोंके अध्ययन या महात्मा पुरुषोंके सत्संगसे दुराचारी मनुष्यकी मुझमें श्रद्धा-भक्ति हो जाती है, वह

तमोमयी) मायासे तर जाते हैं। मायाका काम है, भगवान्के स्वरूपको छिपा देना और अपने स्वरूपको प्रकट करके जीवात्माके स्वरूपमें भोगबृद्धि करा देना, पर जो मुझमें चित्त लगानेवाले होते हैं, वे मेरी कृपासे सभी संकटोंसे पार उतर जाया करते हैं। यथा-मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि। अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि॥

(8138)

मेरा भजन, ध्यान और मेरे बताये रास्तेपर चलने लगता है तो उसका उद्धार हो जाता है। श्रीभगवान् सदाचारी और दुराचारीको किस प्रकार मेरा भजन और मेरी सेवा-पूजा

मुझमें चित्तवाला होकर तू मेरी कृपासे मन और इन्द्रियोंपर विजय करके समस्त कठिनाइयोंको अर्थात् जन्ममरणरूप संसारके समस्त कारणोंको मेरे अनुग्रहसे

तर जायगा अर्थात् पार उतर जायगा और यदि मेरे कहे हुए वचनोंको अहंकारसे कि 'मैं पण्डित हूँ या बुद्धिमान् हूँ'—ऐसा मानकर जो नहीं सुनेगा या अपनी बुद्धि लगायेगा तो उसका पतन होना निश्चित है और वह अधोगतिको प्राप्त हो जायगा।

मन और इन्द्रियोंसहित जिसने भी शरीर जीता हुआ

है, वही अपना मित्र है और जिसके द्वारा मन और इन्द्रियोंसहित

ज्ञानदीपकद्वारा नष्ट कर देता हूँ। इतना ही नहीं जो मेरी

शरणमें रहते हैं, वे मेरी गुणमयी (सत्, रज और

िभाग ९०

(गीता १८।५८)

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥

करनी चाहिये, इसकी विधि बताते हुए गीतामें कहते हैं—

संख्या १२] जय जय दशरथनन्दन! राम!! शरीर नहीं जीता गया है, उसके लिये वह स्वयं शत्रु है। आसक्ति होनेसे ही काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार गीतामें बार-बार उद्धार कैसे हो, कल्याण कैसे हो और आदि अनेक अवगुण आते हैं, जो जन्म-जन्मान्तरतक परम पिता परमात्मासे कैसे मिलें—इसकी विधि बतायी समाप्त नहीं होते। आसक्तिके त्यागसे ही हमारा अन्त:करण गयी है। तुम्हारी आत्मा ही अपना मित्र है। सृष्टिमें न स्वच्छ एवं पवित्र हो सकता है और हम इन बुराइयोंसे दूसरा कोई शत्रु है न मित्र है। हम यदि सचमुच अपना मुक्त हो सकते हैं। क्षमा, सरलता, दया, सन्तोष एवं सत्यरूपी उद्धार चाहते हैं तो सबसे पहले हमें विषय-भोगोंको छोड़ना अमृतको अन्त:करणमें भरकर सेवन करनेसे ही हमें अमृतका ही होगा। इन्द्रियोंद्वारा भोगे जानेवाले विषयोंमें आसक्त लाभ मिलेगा और हमारा उद्धार हो जायगा और जिसने होनेसे ही हम आत्मज्ञानसे वंचित रह जाते हैं। विषय-उस परमतत्त्वको नहीं जाना, जिसने आत्माका अनुभव भोग तो केवल शरीर और मनको ही सन्तुष्ट कर सकते नहीं किया, उसे परमात्मा मिल नहीं सकते, न ही वह मुक्त हैं। आत्माको कभी नहीं। भोगसे वासनाएँ कभी किसीकी हो सकता है, उसकी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ समाप्त नहीं हो तृप्त नहीं हुई हैं। वासनाएँ बार-बार उठती हैं, जो कि सकतीं, उसमें समभाव आ नहीं सकता। ऐसा अज्ञानी अनेक जन्मोंतक चलती रहती हैं। इन विषयोंके प्रति आसक्ति अशान्त बुद्धिवाला होता है। वह सभी स्थानोंपर अशान्त ही हमारे बार-बार जन्म-मृत्युका कारण बनती है। भोगोंमें रहता है और अधोगतिको प्राप्त होता है। जय जय दशरथनन्दन! राम!! (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय') दशरथनन्दन! राम। कलिकलुषनिकन्दन राम॥ टेक॥ जय कौसल्यासुखवर्द्धन हनुमत्परिपूजितपद राम, राम, सेवितसुग्रीवाङ्गद जय जानकीहृदयधन! राम। राम। द्विजगुरुदेवाराधन भरतभावनन्दितनद राम, भुक्तिमुक्तिसृतिसाधन लक्ष्मणवात्सल्यप्रद राम॥ राम॥ स्वीकृतशिवविधिवन्दन सुजनमनः प्रस्यन्दन राम। राम। कलिकलुषनिकन्दन कलिकलुषनिकन्दन जय राम॥ टेक॥ जय राम॥ टेक॥ त्यक्तराज्यवैभवसुख! भक्तिविभावन राम, राम, भवहर सहजमोदमञ्जुलमुख! राम। सरलप्रीत्यनुधावन राम। शरणागतहिताभिमुख! गृहशबरश्रमणावन राम, रागद्वेषपराङ्मुख! करुणाई! पतितपावन राम॥ राम॥ रघुकुलमलयजचन्दन! शमितार्त्तजनक्रन्दन राम। राम। कलिकलुषनिकन्दन कलिकलुषनिकन्दन जय राम॥ टेक॥ राम॥ टेक॥ जय चित्रकूटविहिताश्रम राम, ब्रह्माद्वय सुबृहत्तम राम, मायाधीश महत्तम दण्डकवनगमनश्रम राम। राम। श्रितमायामृगविभ्रम राम, नृपसत्तम राम महाराज! दर्शितचण्डपराक्रम मर्यादापुरुषोत्तम राम॥ राम॥ हृदयस्पन्दन! दुष्टदशमुखस्कन्दन जीवन! राम। कलिकलुषनिकन्दन कलिकलुषनिकन्दन जय राम॥ टेक॥ जय राम॥ टेक॥ दशरथनन्दन! राम। जय कलिकलुषनिकन्दन राम॥ टेक॥ जय

भाग ९० कल्याण माँकी कृपा (महात्मा श्रीश्रीसीतारामदास ॐकारनाथजी महाराज) (8) दुर्गादास कहकर हँसी उड़ाते और दुष्ट लड़के दल हरिचरणका नाम हरिचरण होनेपर भी लोग उसे बाँधकर बोलते— दुर्गा वले दूगो खेपा शाँखा निये जाय। दुर्गादास कहते थे। इसका अवश्य ही कोई कारण था। दुर्गा तार पिछू पिछू घुरिया बेड़ाय॥ उसने जब दीक्षा ली, तब उसके गुरुदेवने कहा कि 'दुर्गा, बोलता हुआ एक पागल शंख (चूड़ियाँ) 'बेटा! 'दुर्गा-दुर्गा' जपना।' लेकर घूमता है और दुर्गा उसके पीछे-पीछे घूमती है।' दुर्गा दुर्गेति दुर्गेति दुर्गानाम परं मनुः। यह सुनकर हरिचरणका शरीर रोमांचित हो उठता, यो जपेत् सततं चण्डि जीवन्मुक्तः स मानवः॥ 'चण्डिके! 'दुर्गा-दुर्गा' नाम ही परम मन्त्र वह पीछे घूमकर देखने लगता कि सचमुच उसके पीछे है। जो मनुष्य इस नामका निरन्तर जाप करता है, वह दुर्गाजी हैं या नहीं! तब बच्चे ताली बजा-बजाकर हँस उठते और उसके ऊपर धूल फेंकने लगते। यह सब जीवन्मुक्त है।' श्रीगुरुदेवके मुखसे यह सुननेके बाद हरिचरणने 'दुर्गा-दुर्गा' बोलना प्रारम्भ किया। हरिचरण सहन करता हुआ वह शंखकी पोटली कन्धेपर रखकर प्रात:काल 'दुर्गा-दुर्गा' कहता हुआ उठता, अविराम 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता आगे बढ़ जाता। अस्तु, अविराम 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता स्नान करता और पूजाके अन्तमें 'दुर्गा' नाम–जपके कारण उसके माता–पिताका दिया 'दुर्गा-दुर्गा' उच्चारण करता हुआ शंखकी पोटली हुआ हरिचरण नाम लुप्त हो गया। जनतामें वह कन्धेपर रखकर बाहर निकल जाता। दुर्गादासके नामसे प्रसिद्ध हो गया, इसमें उसको कोई हरिचरण जातिका शंखारी था। वह शंख (चृडियाँ) दु:ख न था।

'दुर्गा–दुर्गा' बोलनेपर सब लोग उसको सामने दुर्गादास और पीछे दुर्गापागल कहने लगे। हरिचरण उनकी बातें धाँय कर रही थी। दुर्गादास शंखकी पोटली कन्धेपर न सुनकर अपने रंगमें 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता रहता। वह दिनभर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ शंख बेचता फिरता। सन्ध्या हो जानेपर थका-माँदा घर लौटता और खा-पीकर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ सो जाता। उसकी ऐसी अवस्था हो गयी कि सोते रहनेपर भी उसकी जिह्वा जप करती रहती थी। उसकी ऐसी दशा देखकर कामिनी-कांचनके

क्रीतदास, भोगविष्ठाके कृमि पड़ोसियोंने निश्चय किया

कि उसका मस्तिष्क विकृत हो गया है, नहीं तो वह दिन-रात 'दुर्गा-दुर्गा' क्यों करता? जब रोग-शोक,

सुख-दु:ख-सब समय हँसते-हँसते 'दुर्गा-दुर्गा' कहता

है तो फिर पागल हो ही जायगा। जो वयस्क थे, वे

बेचकर जीविका चलाता था। इस प्रकार कुछ दिन

लेकर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ तारिजीपुरकी सीमाके आगे मैदानमें जा पहुँचा। कुछ दूर जानेके बाद मैदानके बीचमें एक पोखरा पड़ा। दुर्गादास पोखरा पार कर गया। इतनेमें उसके कानमें एक आवाज आयी—'अरे लड़के! मुझे शंख देगा?' दुर्गादासने ऐसी मीठी आवाज कभी सुनी न थी। उसने पीछे मुड़कर देखा, एक स्त्री जलमें खड़ी पैर बढ़ाते हुए उसे बुला रही है। वह पीछे घूमकर अवाक् देखता रह गया। बहुत बड़े-बड़े लोगोंके घर शंख पहनाया, किंतू ऐसा रूप उसने कहीं भी न देखा था!

वह एक सघन पेड़के नीचे बैठ गया। धीरे-धीरे

वह बोला—'क्यों नहीं दूँगा, माँ!'

(२)

वैशाखका महीना था। दोपहरकी वेला, धूप धाँय-

संख्या १२] मॉक	ी कृपा २३

वह स्त्री उसके पास आयी। उसका असाधारण-रूप	एक काम करो, गाँवमें जाओ। मेरे बाबाका नाम उमापद
देखकर दुर्गादासने सोचा कि लड़के ठीक ही कहते थे	भट्टाचार्य है। उनके पास जाकर दाम ले लेना। कहना,
कि दुर्गा तेरे पीछे-पीछे घूमती है। वह स्त्री हँसती हुई	'आपकी लड़कीने शंख पहना है, दाम दीजिये।' वे यदि
पास आकर बोली—'बेटा! खूब बढ़िया शंख देखकर	कहें कि 'मेरे तो कोई लड़की नहीं है' तो तुम उनकी
मुझे दे।'	बात न मानना, कहना—'अभी-अभी शंख-चूड़ियाँ
दुर्गादास खूब बढ़िया-बढ़िया शंखकी चूड़ियाँ	C
निकालकर पहनाने लगा। उस स्त्रीका अंग–स्पर्श होते	और कहना—'दुर्गा माईकी प्रतिमाके नीचे सिंदोरेमें एक
ही दुर्गादासका शरीर रोमांचित हो उठा और वह थर-	अठन्नी है, उसे देनेके लिये कहा है''—जाकर कहो,
थर काँपने लगा। चूड़ियाँ पहनाते समय वह निरन्तर	जाओ लड़के!
'दुर्गा-दुर्गा' बोलता जा रहा था। उस स्त्रीने पूछा—'हाँ,	'अभी जाता हूँ, अभी जाता हूँ' कहते–कहते
लड़के ! इस तरह 'दुर्गा-दुर्गा' क्यों करता है ? और ऐसा	दुर्गादास चल पड़ा और स्त्री वापस जलमें उतर गयी।
बोलनेसे क्या होता है?'	(ξ)
दुर्गादासके मुँहसे शब्द नहीं निकल रहे थे। कुछ	पड़ोसी लोग जानते थे कि उमापद भट्टाचार्यको
देर बाद वह बोला—'गुरु महाराजने 'दुर्गा–दुर्गा' बोलनेके	उधार देनेसे वापस मिलनेवाला नहीं है, फिर भी वे उधार
लिये कहा है, इसी कारण बोलता हूँ, माँ! और 'दुर्गा–	दे देते थे।
दुर्गा' बोलनेसे माँ दया करती है।'	उमापद भट्टाचार्यकी अवस्था सदासे ऐसी नहीं
स्त्री—'हाँ, लड़के! तुमने माँको देखा है?'	थी। पहले वे एक धनाढ्य व्यक्ति थे। समयने अचानक
दुर्गादास—'नहीं माँ! मैंने ऐसा पुण्य ही कौन-सा	पलटा खाया और उनकी आर्थिक स्थिति गिरने लगी;
किया है, जो माँको देख पाऊँगा?'	परंतु उनकी वृत्तियाँ उत्तरोत्तर माँ दुर्गाकी ओर खिंचती
स्त्री—'क्यों ? 'दुर्गा-दुर्गा' जपनेसे क्या नहीं हो	ही गयीं। उन्होंने घरमें दुर्गाकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा की।
सकता? यदि नहीं देख सकते तो जपते क्यों हो?'	उनका अधिकांश समय पूजा-पाठ, नाम-जप, ध्यान,
दुर्गादासने कहा—'माँ! मैं मूर्ख आदमी हूँ, ठीकसे	आत्मचिन्तनमें व्यतीत होने लगा। साध्वी पत्नी अन्नपूर्णा
जानता नहीं। यदि नाम लेनेसे देखा जाता है तो मैं	भी पूजा-पाठकी संगिनी होकर सहधर्मिणी नामको
अवश्य देख पाऊँगा।'	सार्थक करने लगीं। पाँच-छ: वर्षका पुत्र शिवराम
चूड़ियाँ पहनायी जा चुकीं। तब स्त्रीने हँसते–हँसते	'दुर्गा–दुर्गा' बोलकर ताली देता और नृत्य करता, इससे
कहा—'अरे लड़के! मेरे पास पैसा तो है ही नहीं। तुम्हें	माता-पिताका आनन्दवर्धन होता था। धीरे-धीरे उनकी
दाम कैसे दूँ? अपनी चूड़ियाँ खोल ले।'	भोगवासना क्षीण होने लगी।
दुर्गादास न जाने क्यों उदास हो गया और बोला—	उमापद भट्टाचार्य नित्य ब्राह्ममुहूर्त्तके पूर्व ही
'ना, रहने दो न, स्त्री-जाति तो साक्षात् भगवती ही होती	उठकर 'दुर्गा–दुर्गा' बोलते हुए स्नान करते, फिर
है। मैं आपके हाथसे शंख नहीं निकाल सकता। मुझे	प्रात:सन्ध्या, जप आदि करके गीता और चण्डी-
दामकी आवश्यकता नहीं'—ऐसा कहकर वह पोटली	स्तोत्रका पाठ करते। अन्तमें पूजन-हवन करके माँको
बाँधने लगा।	भोग प्रदान करते। उसके बाद बलिवैश्वदेव, गोग्रास
उस स्त्रीने कहा—'यह कैसे होगा? मैं तुमसे इस	

भाग ९० ********************** देव्युपनिषद् आदि ग्रन्थोंके अवलोकनमें अपराह्न व्यतीत जयदेवके 'गीत-गोविन्द' में 'देहि पदपल्लवमुदारम्' करते थे। यथासमय सायं-सन्ध्या तथा देवीकी आरती किसने लिखा है-यह बात वे जानते थे। गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजने कई बार भगवान् श्रीरामचन्द्रका करते दीपके प्रकाशमें बैठ जाते थे और बहुत देरतक जप एवं लीला-चिन्तन करते रहते। सायंकृत्य-समाप्तिके दर्शन प्राप्त किया था, यह प्रसंग उन्होंने गोस्वामीजीकी जीवनीमें पढ़ा था। साधक रामप्रसाद सेनकी बेड़ा अन्तमें अतिथि-सेवा करके कुछ प्रसाद ग्रहण करते थे। फिर मध्य रात्रिमें जब जगत् निस्तब्ध हो जाता, तब वे बाँधनेकी कहानी उन्होंने न सुनी हो, ऐसी बात भी न हृदयकमलमें मॉॅंके आगमनकी राह देखते बैठे रहते। इस थी; तथापि उनको संशय था। प्रकार उनके दिन बीतने लगे। अर्थाभावके कारण क्रमश: जब ऋण अत्यधिक बढ गया, तब वे सोचने लगे—'अब और ऋण न लुँगा। अन्नपूर्णा साक्षात् अन्नपूर्णा देवी ही थीं। 'दुर्गा-किसीसे याचना भी न करूँगा। माँ भोजन देंगी तो दुर्गा' बोलते हुए ही ये समस्त गृह-कार्य करतीं। खाऊँगा, न देंगी तो नहीं खाऊँगा। ऋण लेकर दूसरेकी पतिसेवा, देव-सेवा, अतिथिसेवामें ही वे सदा लगी हानि क्यों करूँ ? देखुँ, माँ क्या व्यवस्था करती है ? प्राण रहतीं। उनकी जिह्वा क्षणभर भी 'दुर्गा-दुर्गा' कहनेसे चले जायँ, वह स्वीकार है तथापि माँको छोडकर और नहीं रुकती थी। किसीसे याचना न करूँगा।' उमापद भट्टाचार्यके कई एक पैतृक यजमान थे। सन्ध्या-पूजा आदि कर उन्होंने अन्नपूर्णासे माँको उन्हें उपनयन और विवाहके सिवा और कभी पुरोहितकी समर्पित करनेके लिये भोग माँगा, परंतु आज भोग देनेके आवश्यकता नहीं पडती थी, अतएव यजमान होना-न-लिये घरमें कुछ न था। दोपहर बीत गया है, वे ध्यानमग्न होना समान था। उमापद किसी अन्य प्रकारकी अर्थ-हैं, पुत्र शिवराम भूखसे तड़प रहा है, अन्नपूर्णा 'दुर्गा-चेष्टा नहीं करते थे, इसलिये अर्थोपार्जनकी उदासीनतासे दुर्गा' जप रही हैं। धीरे-धीरे अर्थाभाव बढ़ने लगा। बाजारका उधार अधिक इसी समय बाहरसे किसीने पुकारा—'ओ शिवराम! एक बार बाहर तो आ।' शिवराम आँखें पोंछते हुए हो गया। यदि किसी दिन अभावकी बात मनमें आती तो वे इस प्रकार गुनगुनाने लगते— बाहर आया। कुछ देर बाद एक छोटे दोनेमें कुछ आम और चार सन्देश लेकर घरमें लौटा और माँको देकर भाविले शंकरिपद सम्पद् कोथा पाबे। बोला—'माँ! एक आदमी देवीके भोगके लिये आम सम्पदनाशा जे पद नइले शिव केन श्मशानवासी हबे॥ और सन्देश दे गया है।' कौन दे गया है, यह समझनेमें 'भवानीके चरणोंका चिन्तन करनेसे तुमको सम्पत्ति कहाँ मिलेगी? यदि वे पद सम्पत्ति-नाशक न होते तो अन्नपूर्णाको देर न लगी। अश्रुसिक्त नेत्रोंसे उन्होंने सब शिवजी श्मशानके वासी क्यों होते?' लेकर भगवतीके सामने रख दिया। कुछ देरके बाद —और गाते-गाते तन्मयता इतनी बढ जाती कि उमापदका ध्यान ट्रटा, उन्होंने देखा कि माँके सामने भोग उन्हें अभावका ज्ञान ही नहीं रह जाता। रखा हुआ है, पूछा—'यह सब कहाँसे आया है?' उनके मनमें एक संशय रह-रहकर उठा करता था अन्नपूर्णा बोलीं—'कोई दे गया है।' उमापद सोचने लगे—'क्या माँ पुरुषके आकारमें भी आती हैं ?' उनके कि इष्टदेवका दर्शन भावरूपमें ही होता है अथवा चर्मचक्ष्से भी हो सकता है? कलिके जीव चर्मचक्षुके नेत्र बरस पडे। देवीको भोग लगाया गया। वे बोले—'मॉॅंने शिवरामके द्वारा इष्टदेवताका दर्शन प्राप्त कर सकते हैं या नहीं? इस संशयकी वे कोई मीमांसा नहीं कर सके। कविचक्रवर्ती लिये प्रसाद भेजा है। हम तो उपवास ही करेंगे।' ऐसा

संख्या १२] माँकी	कृपा २५
******************************	**************************************
ही हुआ। 'दुर्गा-दुर्गा' जपते ब्राह्मण-दम्पतीका दिन-	जायगा, क्या करूँ ? किससे क्या प्रार्थना करूँ ? मैंने माँके
रात बीत गया। दूसरे दिन दोपहरको कोई एक कलशी	सामने प्रतिज्ञा की है कि माँको छोड़कर और किसीसे
दूध शिवरामके हाथमें दे गया। उससे माँका भोग लगा	कुछ नहीं माँगूँगा।' बाहरसे अतिथिलोग फिर बोले—
और शिवरामके जीवनकी पुन: रक्षा हुई। ब्राह्मण-	'हमको बहुत प्यास लगी है, थोड़ा जल ले आइये।'
दम्पतीको आज भी उपवास करना पड़ा। तीसरे दिन पूजा	उधर अन्नपूर्णा भी माँके सामने लोट-लोटकर रो
समाप्त हुई, दो पहर बीत गया। भूखसे तड़पकर शिवराम	रही थीं।
रोने लगा, वह किसी प्रकार भी चुप नहीं हो रहा था।	उमापदने कहा—'अन्नपूर्णे! घर खूब तिल-तिल
उमापद प्रतिमाके सामने जाकर बैठ गये और माँके	करके देखो, कहीं कुछ हो तो लेकर आओ, मैं जल ले
मुखकी ओर देखकर पूछने लगे—'माँ! क्या तुम हो?'	जाता हूँ।' इतनेमें एक बिल्लीने कूदकर जलकी कलशीको
उन्होंने मानो माँके अधरोंपर एक क्षीण हास्यकी रेखा	भी गिरा दिया। कैसी विडम्बना है! घरमें एक बूँद जल
देखी। उसी समय बाहरसे किसीने पुकारा—'भट्टाचार्य	भी नहीं है। 'नहीं, नहीं, मैं अतिथिको विमुख जाते नहीं
महाशय घरपर हैं क्या?' उमापदने झाँककर देखा कि	देख सकता। उससे पहले आत्महत्या कर लूँगा।'—
तीन संन्यासी खड़े हैं। वे दौड़कर बाहर गये, आदरपूर्वक	इतना कहकर माँके हाथसे पाश लेकर वे आत्महत्याकी
उन्हें घरमें ले आये, उनके पैर धुलाये, बैठनेके लिये	तैयारीमें लग गये।
आसन दिया, तत्पश्चात् वे पंखा लेकर हवा करने लगे।	ठीक उसी समय दुर्गादासने जाकर पुकारा—
तब उन अतिथियोंमें जो प्रधान थे, बोले—'कलसे हमको	'भट्टाचार्य महाशय! भट्टाचार्य महाशय! क्या कर रहे
अन्न नहीं मिला है, हम बहुत भूखे हैं, हमारे भोजनकी	हैं ? एक बार बाहर आइये!' उन्होंने पाश फेंक दिया
व्यवस्था हो जाय तो अच्छा हो।'	और सोचने लगे—'फिर किसने पुकारा? देखें कौन
उमापदके सिरपर तो मानो आकाश गिर पड़ा।	हैं ?' वे माँ–माँ बोलते हुए बाहर निकले। अधिक
'क्या करूँ ? कैसे अतिथि-सेवा करूँ ? घरमें कुछ भी	विलम्बके कारण अतिथियोंकी सहनशीलताका बाँध टूट
तो नहीं है, क्या होगा?' उनके नेत्रोंमें आँसुओंकी बाढ़-	चुका था। अत: वे जानेका उपक्रम करते हुए बोले—
सी आ रही थी।	'महाशय! आखिर बात क्या है, इतनी देरी क्यों… ?' वे
किवाड़की आड़में खड़ी अन्नपूर्णा 'दुर्गा–दुर्गा'	हाथ जोड़कर कातर स्वरसे बोले—'दया करके थोड़ी-
कहकर रोने लगीं। उमापद उन्मत्तके समान माँकी	सी प्रतीक्षा और करें।' तत्पश्चात् वे आगन्तुककी ओर
प्रतिमाके पास दौड़े गये और फफक पड़े—'माँ! अतिथि	उन्मुख हुए।
विमुख होकर जाना चाहते हैं। हे विपद्-तारिणी माँ! हे	दुर्गादास बोला—'आपकी लड़कीने शंख पहना।
महाभयविनाशिनी माँ! दुर्गे! दुर्गे! रक्षा करो, माँ!'	दाम दीजिये।'
'दुर्गा! दुर्गा! दुर्गा! माँ! आज इस विपत्तिमें मेरी	उमापद—क्या बोलते हो ?
रक्षा करो। पुत्र भले ही चला जाय, इसका मुझे दु:ख	दुर्गादास—आपकी लड़कीने मुझसे शंख पहना है,
नहीं है, परंतु अतिथि विमुख होकर न जायँ, रक्षा करो,	दाम दीजिये।
माँ!'	उमापदने चिकत होकर कहा—'यह क्या ? मेरी तो
'बाहरसे अतिथि पुकार उठे—महाशय! क्या हम	लड़की ही नहीं है।'
लौट जायँ ?'	दुर्गादास बोला—'आप ऐसी ही बात कहेंगे, यह
उमापद पागल-से हो रहे थे—'घरसे अतिथि लौट	उन्होंने पहले ही कह दिया है; मुझसे उन्होंने कह दिया

कोई बाहर नहीं गया, कम-से-कम इधरसे तो कोई नहीं है कि यह बात न सुनना।' उमापद—'लड़कीको कहाँ देखा तुमने?' गया।' उमापदने कहा—'इस घरका दूसरा द्वार तो है नहीं, दुर्गादास—'उस मैदानमें पोखरीपर।' तो क्या मुझे दृष्टिभ्रम हो गया? मैं जाग्रत्-अवस्थामें उमापद—'विचित्र घटना है! मेरी लड़की! अच्छा, स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ? माँ! माँ! यह क्या पहेली है ? माँ! दुर्गा!! दुर्गा!!! यह कैसी परीक्षा माँ ?' देखनेमें वह कैसी थी?' वे बच्चोंकी भाँति फूट-फूटकर रोने लगे। दुर्गादासने कहा—'वह साक्षात् दुर्गाकी प्रतिमा लगती थी! मैंने ऐसा रूप आजतक कहीं नहीं देखा। हाँ, कुछ देर बाद उठकर उन्होंने आम और मिठाई उन्होंने कहा था कि दुर्गामाईकी प्रतिमाके नीचे एक देवीको निवेदन करके दुर्गादास और शिवरामको प्रसाद दिया। स्वयं चरणामृत लिया। दुर्गादासके भोजन कर अठनी है, कृपया उसे जल्दीसे लाकर मुझे दे दें।' लेनेपर उसके हाथमें अठन्नी देकर उमापद बोले—'तुमने उमापद—झटपट घरमें गये। देखा कि सिंदोरेमें सचमुच एक अठन्नी है। उन्होंने वह अठन्नी उठा ली। मेरी लड़कीको कहाँ देखा है, मुझे शीघ्र वहाँ ले चलो।' देखा कि एक और अठन्नी है। उसे भी ले लिया। फिर दुर्गादास भी आश्चर्यचिकत था? उसने अतिथिगणको घरमें देखा था, उसके बाद वे कहाँ चले गये, यह देखा, एक और अठन्नी! यह क्या तमाशा है? सिंदोरेमें ये अठिनयाँ कहाँसे आ रही हैं ? हाथ अठिनयोंसे भर निश्चित न कर सका। अस्तु, दोनों पोखरीकी ओर गया। एक छोटे-से सिंदोरेमें इतनी अठन्नी! यह कैसा लपके। इन्द्रजाल है? मॉॅंके मुखकी ओर देखकर बोले— उमापदने पूछा—'कहाँ देखा था, भैया?' दुर्गादासने 'जादुगरनी माँ! यह कैसा जादु है?' कहा—'इसी पोखरीके घाटपर थी।' परंतु अब उस इसी समय बाहरसे किसीने पुकारा—'भट्टाचार्य स्थानपर कोई न था। 'अरी माँ! अविश्वासीके अविश्वासको महाशय घरपर हैं?' उन्होंने भीतरसे ही उत्तर दिया-चूर्ण-चूर्ण करके कहाँ छिप गयी, माँ! एक बार दर्शन 'हाँ, हैं; क्या बात है?' दो, माँ! एक बार आओ, माँ! तुझमें इतनी करुणा है। यह मैं नहीं जानता था, माँ!' उमापद व्याकुल हो माँ-'जमींदार बाबूने माँके भोगके लिये यह सीधा (अन्नादि) भेजा है।' आवाज आयी। उन्होंने बाहर माँ पुकारने लगे। जाकर देखा-एक बड़े पात्रमें दस-बारह व्यक्तियोंके दुर्गादासकी समझमें अब आया कि आज उसने किसको शंख पहनाया है, अबतक उसे इसका ज्ञान न भोजनके लिये पर्याप्त चावल, दाल, तेल, नमक, तरकारी, आम, सन्देश और मिठाई लिये एक व्यक्ति खडा है! था। वह भी रो पड़ा—'अरे, मैं माँको पाकर भी न इस बार उमापद 'करुणामिय! करुणामिय!' कहकर रोने पहचान सका!' वह पेट पकडकर रोने लगा—'अरी लगे। फिर थोडा धैर्य धारण करके वहींसे अतिथियोंको माँ! एक बार फिर दर्शन दे! तुमने स्वयं शंख पहना है आवाज देते हुए बोले—'महाशयगण! आपलोगोंके न? एक बार बोलो, माँ! मेरी बातको सत्य करो, माँ!' वह पागलकी भाँति इधर-उधर दौड़ने लगा। भोजनकी अभी व्यवस्था करता हूँ; परंतु ज्यों ही घरमें आकर देखा—'यहाँ तो कोई नहीं है। महाविपत्ति! धीरे-धीरे पोखरीके काले जलका भेदन करके अतिथि विमुख होकर चले गये!' दुर्गादास सदर शंख पहने लाल-लाल दो सुन्दर हाथ बाहर निकले। दरवाजेपर खड़ा था। उससे पूछा—'भैया! बताओ तो 'वही माँ है! वही माँ है!!'—कहते–कहते दोनों व्यक्ति संन्यासी लोग किधर गये?' दुर्गादास बोला—'इस घरसे मूर्च्छित होकर गिर पड़े!

िभाग ९०

कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ (पं० श्रीजानकीनाथजी कौल 'कमल', एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर) नीलमतके अनुसार पर्वतराज हिमालयके उत्तर-द्वादशार्कपरिमण्डितमृर्तिरेका या

कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ

संख्या १२]

यह प्रवेशद्वार है।

पश्चिम भागमें लक्ष्मीका प्रदेश (कश्यपपीठ) कश्मीर सिंहासनस्थितिगता ह्युरगैर्वृता च। प्रकृतिकी सुरम्यस्थली है। यह भारतवर्षमें ही नहीं,

देवीमतर्क्यगतिमीश्वरतां तां नौमि भर्गवपुषीं परमार्थराज्ञीम्॥^१

चक्रेश्वरी श्रीशारिका



सारिकाका रूप धारणकर अपनी चोंचसे कण-कण डालकर इसे बनाया। 'सारिका'से ही 'शारिका' बन गया।

'शारिकाशैल' भी कहते हैं। कहा जाता है कि भगवतीने

ये द्वारि-पर्वतके मध्य विराजमान हैं। इसे

'ध्यानरत्नमाला'में देवीका ध्यान इस प्रकार वर्णित है—

बीजैः सप्तभिरुज्वलाकृतिरसौ या सप्तसप्तिद्युतिः

सप्तर्षिप्रणताङ्घ्रिपङ्कजयुगा या सप्तलोकार्तिहृत्।

कश्मीरप्रवरेशमध्यनगरे

प्रद्युम्नपीठे

देवीसप्तकसंयुता भगवती श्रीशारिका पातु नः॥^२

हैं। यहाँ त्रिकोटि देवताओंका वास है। भक्तजन नित्यप्रति

द्वारि-पर्वतके स्थान-स्थानपर देवी-देवताओंके निर्देश

गया है-१. इस श्लोकका तात्पर्य इस प्रकार है—जिन भगवतीका श्रीविग्रह द्वादश आदित्योंकी प्रभासे विद्योतित है, जो अनुपमेय हैं, सिंहके

संसारभरमें अपनी रमणीयताके लिये विशेष प्रसिद्ध है।

शक्ति-उपासनाके आधाररूपमें यह प्रदेश अति प्राचीनकालसे विशेष आदर पाता रहा है। रुद्रयामल-तन्त्रमें कहा है-'शैवीमुखमिहोच्यते' अर्थात् शक्ति-शिवके साक्षात्कारका

'नीलमत-पुराण' इसका स्थलपुराण है। तदनुसार

यहाँ भगवती शारदा, भगवती राजराजेश्वरी लक्ष्मी (श्रीनगर) महारानी, भगवती शारिका, भगवती ज्वालाके रूपमें शक्ति-उपासना की जाती रही है। कहते हैं कि आद्यशंकराचार्यको यहाँके 'शारदा-पीठ' (जो अब पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीरमें है)-से ही 'जगदुगुरु' की महान् उपाधि प्राप्त हुई थी। भारतके प्रसिद्ध ५१ शक्ति-महापीठोंमेंसे यहाँ श्रीनगरमें सतीके अंग तथा अङ्गभूषण-कण्ठप्रदेशकी पूजा होती है। शक्तिका नाम

'महामाया' है और भैरव 'त्रिसन्ध्येश्वर' हैं। कश्मीरके

कतिपय अन्य शक्तिपीठोंका परिचय इस प्रकार है-

राजराजेश्वरी श्रीमहाराजी

ग्राममें है। यहाँ षट्कोण तथा ओंकारके आकारका

अमृतकुण्ड (चश्मा या नाग) है, जिसके मध्य महाराज्ञीका

मूर्ति-विग्रह संगमरमरके सुन्दर मन्दिरमें स्थापित है।

इस सुन्दर भूमि-भागमें चारों ओर सिन्धुनदीका नाला

बहता है। भगवतीके ध्यानका इस प्रकार वर्णन किया

यह तीर्थस्थान श्रीनगरसे २८ कि॰मी॰ दुर तुलमूल

आसनपर विराजमान हैं, सर्पोंसे सेवित हैं, अचिन्त्य सामर्थ्यशालिनी तथा परमैश्वर्यमें अधिष्ठित हैं, उन तेजोमयी एवं परमार्थकी अधिष्ठात्री श्रीराजराजेश्वरी देवीको प्रणाम करता हूँ।

२. इस श्लोकका तात्पर्य इस प्रकार है—सप्तबीजोंके द्वारा जिनकी आकृति सदा उज्ज्वल बनी रहती है एवं जिनकी प्रभा सूर्यके समान है।

जिनके कुमलको तरह सुन्दर युगल चरणोंमें सुद्धा सप्तर्शिगण प्रणत रहते हैं। जो सातों लोकोंक दुःख मुद्दा हुरण करती हैं जो अत्यूतम् कर्सार Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma मण्डलको मध्यनगरीक प्रद्यम्नपीठपर विराजमान रहती है। सात टीवयोक साथ सटा रहनेवाली वे भगवती श्रीणारिकाजी दूप मधीकी रक्षा करें।

विशेषकर प्रात:काल इस श्रेष्ठ पर्वतकी परिक्रमा करते 'नीलमतपुराण' के अनुसार और भी कई मन्दिर हैं, जो

कश्मीरी-पण्डितजनोंकी अधिष्ठात्री देवियाँ हैं। विशेष

गृहस्थोंके साथ विशेष देवियाँ जुड़ी हैं। इनके अतिरिक्त

बहुत-से और शक्ति-स्थान कश्मीरमें विद्यमान हैं। उनका

वर्णन स्थानाभावके कारण यहाँ नहीं दिया जा सका है। क्षीरभवानी योगमाया

कश्मीरकी राजधानी श्रीनगरसे पन्द्रह मील उत्तर

क्षीरभवानीके मण्डपके चारों ओर कुण्ड-जलके रंग-परिवर्तनपर श्रद्धालु शुभाशुभका विचार करते हैं।

माता सारिका देवी

खट्वांग, गदा, अंकुश, त्रिशूल वर। तोमर, मूसल, पुस्तक, शुभ मुग्दर॥ श्चि धनुष, अभय-वर-मुद्रा अष्टादशभुज शशि-शिर शुभ शोभित आभूषण-वसन अङ्ग-अङ्ग अति द्युति बिमल। सुमङ्गल-मूल मृदु मातु सारिका-पद-कमल॥ [पद-रत्नाकर]

हैं, जो लगभग चार किलोमीटर है। ऊपर कहे दोनों तीर्थस्थानोंमें रुद्रयामलतन्त्रान्तर्गत भवानीनामसहस्रस्तवराज तथा कालिदासकृत 'पञ्चस्तवी' (जिसमें लघुस्तव, चर्चास्तव, घटस्तव, अम्बास्तव और

सकलजननीस्तव—ये पाँच स्तव हैं।)-का पाठ किया जाता है। आद्यशंकराचार्यकृत 'सौन्दर्यलहरी' का भी यहाँ अधिक प्रचार रहा है। ये ग्रन्थ षट्चक्र-रहस्य और श्रीचक्र-विश्लेषणमें उत्तम माने जाते हैं, फिर भी यहाँके

साधारण जनमें भवानीनामसहस्रशक्ति-उपासनाका विशेष माध्यम रहा है। इस स्तवराजका पाठ और जप प्राचीन कालसे होता चला आ रहा है। यह इसकी बहुसंख्यक

प्राचीन प्राप्त हस्तलिपियोंसे ज्ञात होता है। श्रीसाहिब कौल शक्ति-साधनाके विशेष आचार्य हुए हैं। जिन्होंने 'भवानीसहस्रनाम' पर 'देवीनामविलास'

नामसे विशद व्याख्या लिखी है। श्रीज्वालाजी इनका विशाल मन्दिर श्रीनगरसे १८ किलोमीटर

दूर खिब गाँवमें पर्वत-खण्डपर स्थित है। यहाँ आषाढ़

शुक्ल चतुर्दशीको एक बड़ा मेला लगता है। भक्तजन पर्वतपादमें स्थित जल-कुण्डमें स्नान-तर्पण और अर्चन-ध्यानकर पत्थर-निर्मित सीढियोंसे ऊपर जाकर ज्वाला देवीजीका दर्शन-पूजन करते हैं।

कुलवागीश्वरी

श्रीनगरसे लगभग ६० कि०मी० दूर अनन्तनागके प्रान्तमें कुलगामके स्थानपर देवीके कुण्ड तथा मन्दिर हैं।

'गन्धर्व'-स्थान है। इसके पास ही क्षीरभवानी योगमायाका

मन्दिर है। चारों ओर जल और बीचमें एक टापू है। इस स्थानकी शोभा अत्यन्त सुरम्य है। चिनारोंके वृक्षोंकी पंक्ति

और मन्दिरकी पवित्रता तथा प्राकृतिक सुन्दरता भावुक धार्मिक पर्यटकोंकी दृष्टि सहज ही आकृष्ट कर लेती है। ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमीको यहाँ एक बड़ा मेला लगता है।

प्राय: वैदिक विधिसे यहाँ साधना करनेकी परम्परा है।

संख्या १२] कैसे बनें भगव	nन् के प्रेमी भक्त ? २९			
*******************************	**************************************			
कैसे बनें भगवान्के प्रेमी भक्त ?				
	् मचन्दजी प्रजापति)			
महिमा—भगवान्को सबसे ज्यादा प्यारा लगता	पत्नी, पति, संतान आदि परिवारजनोंका सुख है; धन,			
है—उनका अपना प्रेमी भक्त। श्रीमद्भागवतमें भगवान्की	_			
वाणी है—	मान-सम्मान, यश-प्रतिष्ठा आदिका सुख है; आपके			
न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः।	व्यक्तित्वमें अनेक गुण हैं—आप बहुत विद्वान् हैं, बहुत			
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नेवात्मा च यथा भवान्॥	पढ़े-लिखे हैं, बहुत बलवान् हैं, शक्तिशाली हैं, बहुत			
(११।१४।१५)	उच्च पदपर कार्यरत हैं, आदि आदि, लेकिन यदि आपके			
अर्थात् हे उद्भव! मुझे तुम-जैसे प्रेमी भक्त जितने	जीवनमें भक्ति नहीं है तो इन सबका कोई खास महत्त्व			
प्रियतम हैं, उतने प्रिय मेरे पुत्र ब्रह्मा, आत्मा शङ्कर, सगे	नहीं है। श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामकी वाणी है—			
भाई बलरामजी, स्वयं अर्धांगिनी लक्ष्मीजी और मेर	कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता॥			
अपना आत्मा भी नहीं है।	जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।।			
न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव।	भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा॥			
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥	(३।३५।४—६)			
(११।१४।२०)	अर्थात् श्रीरघुनाथजीने (शबरी)-से कहा—हे			
अर्थात् हे उद्धव! योग-साधन, ज्ञान-विज्ञान,	•			
धर्मानुष्ठान, जप-पाठ और तप-त्याग मुझे प्राप्त करानेमें	सम्बन्ध मानता हूँ। जाति, पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन,			
उतने समर्थ नहीं हैं, जितनी दिनों दिन बढ़नेवाली अनन्य				
प्रेममयी मेरी भक्ति।	भक्तिसे रहित मनुष्य कैसा लगता है, जैसे जलहीन			
भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयाऽऽत्मा प्रियः सताम्।	बादल (शोभाहीन) दिखायी पड़ता है।			
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्॥	भगति हीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥			
(११।१४।२१)	(७।८६।९)			
अर्थात् मैं सन्तोंका प्रियतम आत्मा हूँ। मैं अनन्य				
श्रद्धा और अनन्य प्रेमसे ही पकड़में आता हूँ। मुझे प्राप्त				
करनेका यह एक ही उपाय है। मेरी अनन्य भक्ति उन	•			
लोगोंको भी पवित्र—जातिदोषसे मुक्त कर देती है, जो	जो मुनि कोटि जतन निहं लहहीं। जे जप जोग अनल तन दहहीं॥			
जन्मसे ही चाण्डाल हैं।	रीझेउँ देखि तोरि चतुराई। मागेहु भगति मोहि अति भाई॥			
श्रीरामचरितमानसमें भगवान्की वाणी है—	सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरें। सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरें॥			
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी।	भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य बिभागा॥			
(७।८६।१०)	जानब तैं सबही कर भेदा। मम प्रसाद निहं साधन खेदा॥			
अर्थात् भक्तिमान् अत्यन्त नीच भी प्राणी मुझे	माया संभव भ्रम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।			
प्राणोंके समान प्रिय है, यह मेरी घोषणा है।	जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि॥			
गुणों एवं सुखका महत्त्व नहीं—आपके पास				
स्वस्थ शरीर एवं सबल इन्द्रियोंका सुख है; सेवाभावी	अर्थात् तूने सब सुखोंकी खान भक्ति माँग ली।			

जगत्में तेरे समान बड़भागी कोई नहीं है। वे मुनि जो एक बाल (केश) भी नहीं; लेकिन अपने प्रेमास्पद जप और योगकी अग्निसे शरीर जलाते रहते हैं, करोड़ों प्रभुका मानकर इन सबको रखता है। क्यों रखता है? इसका उत्तर है-अपने प्रेमास्पद प्रभुकी प्रसन्नताके यत्न करके भी जिसको (जिस भक्तिको) नहीं पाते। वही भक्ति तूने माँगी। तेरी चतुरता देखकर मैं रीझ गया। लिये, न कि अपने सुख, अपनी प्रसन्नताके लिये। अपना माननेका नाम है—मोह, ममता; अपनेको इनका मालिक यह चतुरता मुझे बहुत ही अच्छी लगी। हे पक्षी! सुन, मेरी कृपासे अब समस्त शुभ गुण तेरे हृदयमें मानना, इनसे सुख लेनेकी आशा, इच्छा रखना। आशा, बसेंगे। भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, योग, मेरी लीलाएँ इच्छा ही बन्धन है, फँसावट है, जन्म-मरणका मूल और उनके रहस्य तथा विभाग—इन सबके भेदको तू कारण है। इनकी विशुद्ध सेवाके लिये इनको मेरा मानना मेरी कृपासे ही जान जायगा। तुझे साधनका कष्ट नहीं बन्धन नहीं है। इनको प्रभुकी मानें और प्रभुकी प्रसन्नताके लिये इनकी सेवा करना तो महान् भक्ति है। होगा। मायासे उत्पन्न सब भ्रम अब तुझको नहीं व्यापेंगे। श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामकी वाणी है-मुझे अनादि, अजन्मा, अगुण (प्रकृतिके गुणोंसे रहित) जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥ और (गुणातीत दिव्य) गुणोंकी खान ब्रह्म जानना। सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनिह बाँध बरि डोरी।। श्रीरामचरितमानसमें आया है-समरदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं।। अस सञ्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें॥ भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे॥ भजन हीन सुख कवने काजा। (418818-6) इसका अर्थ है—माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, (७।८४क।५-६) अर्थात् भक्तिसे रहित सब गुण और सब सुख वैसे शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार—इन सबके ममत्व-ही (फीके) हैं, जैसे नमकके बिना बहुत प्रकारके रूपी तागोंको बटोरकर और उन सबकी एक डोरी भोजनके पदार्थ। भजनसे रहित सुख किस कामके? बटकर उसके द्वारा जो अपने मनको मेरे चरणोंमें बाँध कैसे बनें प्रेमी भक्त-जिसके जीवनमें तीन बातें देता है (सारे सांसारिक सम्बन्धोंका केन्द्र मुझे बना लेता होती हैं, वह प्रेमी भक्त बन जाता है— है), जो समदर्शी है, जिसे कुछ इच्छा नहीं है और (१) कुछ नहीं रखना—प्रेमी भक्त वह होता है, जिसके मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है, ऐसा सज्जन जो अपने पास कुछ भी नहीं रखता है-न सामान, न मेरे हृदयमें कैसे बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बसा मकान, न कुटिया, न आश्रम, न सम्पत्ति; न पति, पत्नी, करता है। संतान, माता-पिता, भाई-बहन आदि परिवारजन, न (२) कुछ नहीं करना—तीन शब्द हैं—प्रेम, प्रेमी और प्रेमास्पद। प्रेमका अर्थ है—प्रसन्नता। प्रेम सेवक, न शिष्य; न शरीर, न इन्द्रियाँ, न मन, न बुद्धि, न विवेक; न स्वयं अपने आपको। प्रेमी सर्वथा अकिंचन देनेका अर्थ है-प्रसन्तता देनेकी भावना रखना और प्रसन्नता देना। प्रेमीका अर्थ है—प्रेम या प्रसन्नता होता है। रहस्यकी बात—प्रश्न उठता है—कुछ न रखनेसे देनेवाला; जो प्रेम देता है, उसका नाम है-प्रेमी। जीवन कैसे चलेगा, शरीरका निर्वाह कैसे होगा, क्या जिसको प्रेम देते हैं, उसका नाम है—प्रेमास्पद। यहाँ शरीरको भी नहीं रखेगा आदि आदि। इनका उत्तर है— प्रेमीका नाम है—प्रेमी भक्त और प्रेमास्पदका नाम है— प्रेमी अपने पास 'अपना मानकर' कुछ नहीं रखता है, भगवान्।

भाग ९०

ख्या १२]		

विभिन्न कार्य—चौबीस घण्टेमें		सामाजिक, सांसारिक कार्य करता है। अपने सुखके
प्रकारके कार्य करता है—जैसे शरीरके		बारेमें वह न कभी कुछ सोचता है, न कभी कुछ करता
उठना, शौच जाना, स्नान करना, टहल 		है। भगवान्की परम प्रेमी भक्त राधाजी और ब्रज-
प्राणायाम करना, नाश्ता एवं भोजन करना,		गोपियोंके जीवन, सभी प्रवृत्तियों, निवृत्तियोंका एकमात्र
आदि; घर-परिवारके कार्य जैसे घरकी		उद्देश्य था—अपने प्रेमास्पद श्रीकृष्णकी प्रसन्नता।
कपड़े धोना, भोजन बनाना, बर्तन साफ क		सर्वस्व त्याग—प्रेमीके हृदयमें अपने प्रेमास्पद
लालन-पालन करना, उनको स्कूल भे	•	प्रभुको प्रेम देनेका भाव इतना प्रबल होता है कि उनकी
परिवारके सदस्योंकी सेवा करना आदि; साम	गन, सम्पत्तिकी	प्रसन्नताके लिये वह अपना सर्वस्व न्योछावर करने,
सँभाल एवं सुरक्षा; नौकरी, व्यवसाय, स	माज, संसारके	अपने प्राणोंका परित्याग करने, भीषणतम नारकीय
कार्य; भगवान्के दर्शन, भगवान्की पूज	ना, भगवान्के	यातनाएँ भोगने और बड़े-से-बड़ा कलंक सहन करनेके
नामका जप, भगवान्का ध्यान, ग्रन्थोंका पा	ठ, भगवान्की	लिये सदैव सहर्ष तैयार रहता है। उसको अपने सुख-
लीलाओंका श्रवण, पठन, गुणगान, तीर्थ	, व्रत आदि।	दु:खका आभास ही नहीं होता है।
तीन उद्देश्य—इन सब कार्योंको	करनेके तीन	प्रेमी भक्तकी प्रार्थना —प्रेमी तो अपने प्रेमास्पदसे
उद्देश्य हो सकते हैं—अपना सुख, पर (दू	परोंका)-हित,	यहाँतक निवेदन करता है कि हे प्रेमास्पद! यदि आपकी
प्रभुकी प्रसन्नता।		प्रसन्नता मुझे नरकमें रखनेमें है, रोगी और निर्धन बनानेमें
प्रेमी भक्त —प्रेमी भक्त वह होता	है, जो अपने	है, अपमानित करवानेमें है, घाटा लगानेमें है, प्रियजनोंके
सुख-सम्पादनके उद्देश्यसे कोई भी कार्य,	कुछ भी नहीं	प्रतिकूल व्यवहार और उनके वियोगमें है तो एक जन्म
करता है, कुछ भी नहीं सोचता है;	लेकिन अपने	नहीं, असंख्य कल्पोंतक मुझे रौरव नरकमें डाल दीजिये,
प्रेमास्पद प्रभुकी प्रसन्नताके लिये सब वु	कुछ करता है,	एक इंसानसे नहीं, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डसे मुझे अपमानित
निरन्तर सोचता रहता है। प्रेमी भक्तका	जीवन, उसके	करवा दीजिये, इस ब्रह्माण्डका निर्धनतम व्यक्ति बना
जीवनका एकमात्र उद्देश्य होता है—अ	ापने प्रेमास्पद	दीजिये, शरीरके रोम-रोममें असंख्य रोग पैदा कर
प्रभुकी प्रसन्नता; उसका चिन्तन होता	है-प्रेमास्पद	दीजिये, प्रियतम-प्रियजनों और इस शरीरका वियोग कर
प्रभुकी प्रसन्नता; उसकी सभी प्रवृत्तियों	(कार्यों)-का	दीजिये। यदि आपकी प्रसन्नता इन सबमें है तो मुझे ये
उद्देश्य होता है—प्रेमास्पद प्रभुकी प्रस	न्नता; उसकी	सब सहर्ष स्वीकार हैं। प्रेमीकी दृष्टि अपने प्रेमास्पदकी
निवृत्तिका उद्देश्य होता है—अपने प्रेम	ास्पद प्रभुकी	प्रसन्नतापर रहती है, पथमें आनेवाली कठिनाइयोंपर
प्रसन्नता। अपने प्रेमास्पद प्रभुकी प्रसन्नत	कि लिये प्रेमी	नहीं। पथकी कठिनाइयोंके परिणामस्वरूप प्रेमीके बाह्य
सोता है, उठता है, शौच-स्नान आदिसे नि	वृत्त होता है।	जीवनमें जो तकलीफ आती हुई दिखायी देती है,
अपने प्रेमास्पद प्रभुकी प्रसन्नताके लिये प्रेम	ी अपने प्रभुके	प्रेमास्पदकी प्रसन्नतासे मिलनेवाले अलौकिक आनन्दमें
दर्शन करता है, उनको प्रणाम करता है	, उनका नाम	वह तकलीफ इसी प्रकारसे घुलमिल जाती है, जैसे
जपता है, उनका ध्यान करता है, उनकी र्ल	ोलास्थलियोंके	समुद्रमें नमकका एक कण, प्रेमीको उस तकलीफका
दर्शन करता है, उनकी लीलाओंको सुनता	है, सुनाता है,	पता ही नहीं चलता है।
गाता है, कथा–प्रवचन सुनता है, सुनात Hinduism Discord Server https प्रभुको प्रसन्नतिक लिये सभा शारीरिक	ता है। केवल :// <mark>dsc.gg/d</mark> h ; पारिवारिक,	प्रेममूर्ति श्रीराधाजीकी प्रार्थना— श्रीराधाजी a <u>tma MADE WIT</u> H:LOVE BY Avinash/Sha कुरती हैं—

भाग ९० अर्थात् हे प्रभु! यदि आपकी यह इच्छा है कि मिलती अगर सान्त्वना तुमको मेरे दुःखसे, हे प्रियतम। आप मेरी इच्छाको पूरी करें, तो आप अपनी जो भी तो लाखों अतिशय दुःखोंसे घिरी रहूँगी मैं हरदम॥ इच्छा है, उसको पूरी कर लीजिये, बस मेरी यही इच्छा किंचित्-सा भी यदि सुख देता हो तुमको मेरा अपमान। है। आपकी इच्छा पूरी हो, इसीमें मेरा कल्याण है। हे तो लाखों अपमानोंको मैं मानूँगी प्रभुका वरदान॥ प्रभु! मैं मूर्ख और अनजान हूँ, इसलिये आप मेरी इच्छा यदि प्यारे! मेरे वियोगमें मिलता तुम्हें कहीं आराम। कभी नहीं मिलने का मैं व्रत लूँगी, मेरे प्राणाराम॥ पूरी मत करना। हे प्रभु! आपकी इच्छा ही सदैव मेरी इच्छा हो। मेरी आर्ति-विपत्ति कदाचित् तुम्हें सुहाती हो यदि श्याम। आपसे अलग मेरी कोई भी इच्छा न रहे और न मैं किसी तो रखूँगी इन्हें पास मैं सपरिवार नित, दे आराम॥ (सांसारिक वस्तु-व्यक्ति)-की परवाह करूँ। मैं केवल मेरा मरण तुम्हें यदि देता हो किंचित्-सा भी आश्वास। आपकी इच्छाके अनुसार चलता रहूँ। जगत् बिगड़े चाहे तो मैं मरण वरण कर लूँगी, निकल जायेगा तन से श्वास॥ बनें, मैं दोनों परिस्थितियोंमें अत्यन्त प्रसन्न रहूँ और यही सुखी रहो तुम सदा एक बस, यही नित्य मेरे मन चाह। कहूँ — 'मेरे प्यारे — वाह, वाह प्यारे, वाह प्यारे।' हर स्थिति में मैं सुखी रहूँगी, नहीं करूँगी कुछ परवाह।। (भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार—पद-रत्नाकर, पद सं० ७२७) श्रीमद्भागवतमें भगवान्की वाणी है— इसका भाव इस प्रकार है—श्रीराधाजी भगवान्से न पारमेष्ठ्यं न महेन्द्रधिष्णयं प्रार्थना करती हैं-हे भगवन्! यदि आपकी प्रसन्नता न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम्। इसमें हो कि मेरे जीवनमें दु:ख आये, मेरा अपमान हो, योगसिद्धीरपुनर्भवं न आपसे मेरा वियोग हो जाय, मेरे जीवनमें खूब विपत्तियाँ मय्यर्पितात्मेच्छति मद् विनान्यत्॥ आयें, मैं मर जाऊँ तो आप ऐसा सब कुछ मेरे साथ कर (४१।४४।१४) दीजिये। मैं इन सबमें प्रसन्न रहूँगी। अर्थात् जिसने अपनेको मुझे सौंप दिया है, वह (३) कोई इच्छा नहीं होना — प्रेमी भक्त वह होता मुझे छोड़कर न तो ब्रह्माका पद चाहता है और न है जिसकी अपनी कोई इच्छा नहीं होती है, लेकिन जिसकी देवराज इन्द्रका, उसके मनमें न तो सार्वभौम सम्राट् एक जबरदस्त इच्छा होती है कि मेरे प्रेमास्पद प्रभुकी बननेकी इच्छा होती है और न वह स्वर्गसे भी श्रेष्ठ इच्छा पूरी हो और मेरे प्रभु प्रसन्नचित्त रहें। इसलिये प्रेमी रसातलका ही स्वामी होना चाहता है। वह योगकी अपने प्रेमास्पद प्रभुसे सदैव यही निवेदन करता है— बड़ी-बड़ी सिद्धियों और मोक्षतककी अभिलाषा नहीं चाही करन की, जो है तुम्हरी चाह। मेरी करता। है मेरी धर्मः सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता। करो, यह अपनी चाही चाह॥ है मेरा मद्भवत्यापेतमात्मानं न सम्यक् प्रपुनाति हि॥ तुम्हरी चाही प्रभु, में कल्याण। करो, मैं चाही मूरख मत (११।१४।२२) अनजान॥ अर्थात् इसके विपरीत जो मेरी भक्तिसे वंचित है, चाह तुम्हारी ही हो प्यारे! नित्य-निरन्तर मेरी चाह। उनके चित्तको सत्य और दयासे युक्त, धर्म और तपस्यासे चाह न रहे अलग कुछ मेरी, नहीं किसी की हो परवाह।। चलता रहूँ निरन्तर, प्यारे! केवल एक तुम्हारी राह। युक्त विद्या भी भलीभाँति पवित्र करनेमें असमर्थ है। अत: प्रेमी भक्त बन जाना ही इस जीवनकी बिगड़े-बने जगत् का कुछ भी, कहूँ निरन्तर प्यारे! वाह॥ (भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सर्वोच्च सफलता एवं पूर्णता है।

संख्या १२] प्रभो! आपको कैसे प्रसन्न करें?

<u>हर्जन्द्र तर्जन्य प्रभो! आपको कैसे प्रसन्न करें?</u>

श्रीरामकथाका एक प्रभो! आपको केसे प्रसन्न करें?

पावन-प्रसंग—

[श्रीराम-हनुमान्-संवाद]

(आचार्य श्रीरामरंगजी)

श्रीवसिष्ठाश्रमसे लौटकर श्रीराम राजभवन आ गये। 'प्रभो!

(आचार्य श्रीरामरंगजी) राजभवन आ गये। 'प्रभो! मैं यह मारुति, जो आपका दासानुदास है,

रहा हूँ।'

पर्याप्त है।'

ताम्बूल हो तो?'

उनके संकेतपर हनुमान् भी कनकभवनमें आ गये। केवल उसके विषयमें नहीं अपितु जीव-जगत्के प्रत्येक जनकनिन्दिनी जानकी भी उनके समीप आकर बैठ गयीं। जीवके कल्याणके निमित्त ही यह प्रश्न कर रहा हूँ। आज श्रीरामके नेत्रोंसे प्रसन्नता फूटी पड़ रही थी। उन्हें महाराजा दशरथके पुत्र परब्रह्म परमेश्वरसे यह प्रश्न कर

आज श्रीरामके नेत्रोंसे प्रसन्नता फूटी पड़ रही थी। उन्हें अत्यन्त प्रहर्षित अनुभव करते हुए जानकी धीरेसे बोलीं, 'लगता है आज हमारे स्वामीको कुछ विशेष उपलब्धि— किसी भुवनके धनाध्यक्षकी नवनिधि ही प्राप्त हो गयी?' 'वैदेहि! इससे भी अधिक, यह मानिये कि समस्त भुवनोंके धनाध्यक्षोंकी नवाधिक निधियोंसे भी अधिकाधिक ही प्राप्त करते हुए हम यहाँ आये हैं।' 'ऐसा क्या यदि…'

'हाँ, तुम भी सुनोगी तो यही कहोगी' 'तो सुनाइये न' 'आज हमें अपने मारुतिका, हमारे प्रति क्या भाव है, उससे हम परिचित हो गये।'कहते हुए श्रीरामने विसष्ठाश्रमके प्रसंगका समस्त वर्णन कर डाला। सीता सुनकर बोलीं, 'हम कुछ-कुछ तो जानती थीं। शेष आपसे सुनकर कुछ

'हम कुछ-कुछ ता जानता था। शष आपस सुनकर कुछ और भी जान गयीं। किंतु आप क्षमा करें, जो आप बता रहे हैं, वह इन पवनात्मजको देखते हुए अपूर्ण ही है।' जनकनन्दिनीके शब्द सुनकर श्रीराम उनकी ओर

जनकनिदनीके शब्द सुनकर श्रीराम उनकी ओर गम्भीरतापूर्वक देखते हुए बोले— 'प्राणवल्लभे! तुम सत्य कहती हो। मारुति क्या हैं, उन्हें त्रैलोक्यभरमें वस्तुत: कोई न जानता है और न

ह, उन्हें त्रलाक्यमरम वस्तुत: काई न जानता ह आर न ही जान सकता है। यदि कोई कहे कि 'मैं मारुतिको जानता हूँ तो उसे आत्मप्रवंचक (स्वयं ही स्वयंको छलनेवाला) कहनेके अतिरिक्त तो हमारे पास कोई अन्य

शब्द नहीं है।'
श्रीराम अभी कुछ और भी कहते कि उससे पूर्व ही मारुति बोल उठे—'प्रभो! यह बताइये कि आपको

ही मारुति बोल उठे—'प्रभो! यह बताइये कि आपको कैसे प्रसन्न किया जाय?' 'मारुति! यह तुम क्या प्रश्न कर रहे हो? यह राम

तुमसे स्वप्नमें भी अप्रसन्न नहीं हो सकता।

'मस्तकपर भी कुछ भार रखा हुआ हो तो?' 'हनुमंत! हम समझ गये। तुम जगज्जीवोंके कल्याणके निमित्त आज एक कटिबद्ध योद्धाकी भूमिकामें उपस्थित हो। तो हम भी तुम्हें उत्तर-पर-उत्तर देनेके

लिये प्रस्तुत हैं। अन्तिम उत्तर, बाह्य रूपसे यही है कि केवल पलकें झुकाकर प्रणाम कर ले। पलकोंसे प्रणाम

करनेवालेका मैं जन्म-जन्मके लिये ऋणी हो जाता हूँ।'

'समझे-समझे, ये पूजा-पाठ—अनेक पदार्थींके

'किंतु स्वामिन्! यदि मुखमें कोई पदार्थ अथवा

'तो हमारा ध्यान करते हुए हाथ जोड़ दे।'

'हाथोंमें भी कुछ हो तो?'

'मस्तक झुका दे।'

समर्पण-तीर्थ-व्रतकी अपेक्षा 'मैं आपको प्रणाम करता

हूँ' हमारी प्रसन्नताके लिये मुखसे इतना कहना ही

उसकी निरन्तर परिक्रमा करने लगता हूँ कि यह मुझसे कुछ तो कहे। ताकि मैं उसकी यथासम्भव पूर्ति करते हुए उससे ऋण-मुक्त हो सकूँ क्या, अपितु स्वयंको धन्यातिधन्य अनुभव कर सकूँ। 'जहाँतक अन्तरका सम्बन्ध है तो मुझसे अधिक तुम्हारा अन्तर इस तत्त्वको जानता है।'

तुम्हारा अन्तर इस तत्त्वको जानता है।'

मारुति जनकनन्दिनीकी ओर देखते हुए बोले,
'जगदम्बिके! इतने सहजमें प्रसन्न होनेवाले ठाकुरके

जगदाम्बक! इतन सहजम प्रसन्न हानवाल ठाकुरक स्थानपर जो कठिन तपस्याएँ कर-करके, किन्हीं-किन्हींसे दुर्लभातिदुर्लभ वर पाकर, अहमाश्रित होकर सर्वनाशका वरण करते हैं, उन्हें क्या कहा जाय?'

डेंगू बुखारका आसान आयुर्वेदिक उपचार (डॉ० श्रीदिलीपकुमारजी)

देशके विभिन्न प्रान्तोंके महानगरों एवं जनपदोंसे भारतीय उपमहाद्वीपके सभी भागोंमें आसानीसे

'हड्डीतोड़ बुखार' डेंगूसे मरीजोंकी मौतकी सूचना उगनेवाली वनस्पतियोंसे आयुर्वेदिक चिकित्सक डेंगू-जैसे

लगातार प्राप्त हो रही है। वास्तवमें मादा 'एडीज' संक्रामक बुखारकी मुख्य समस्या रोगीके रक्तमें प्लेटलेट्सकी

गिरावटको सफलतापूर्वक नियन्त्रितकर उपचार करनेमें सफल

मच्छरोंके काटनेपर होनेवाले संक्रामक डेंगू बुखारमें

मरीजके शरीरमें 'डेंगे' नामक रोगाणुओंका संक्रमण हो

हुए हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सकोंने वनौषधियोंके काढे-

जाता है, जिससे संक्रमित व्यक्तिके शरीरमें 'प्लेटलेट्स'की स्वरस तथा इनसे बनी गोलियोंका प्रयोगकर अनेक डेंगू

संख्यामें बडी तेजीसे गिरावट आने लगती है।

चिकित्सा-वैज्ञानिकोंका मत है कि प्लेटलेट्स

स्तनधारियोंके शरीरके खुनको पतला होनेसे रोकते हैं।

इसकी कमी होनेपर मरीजके मुँह, नाक, पेशाब, मलद्वार

और मसूढ़ोंसे रक्तस्राव होने लगता है। इसके साथ ही

जब शरीरकी धमनियोंमें किसी प्रकारकी क्षति होती है

तो सक्रिय होकर ये प्लेटलेट्स ही रक्तवाहिकाओंसे स्नावित होनेवाले 'कोलाजन' के साथ मिलकर थ्राम्बिन-प्रोथाम्बिनकी

एक अस्थायी दीवार बना देते हैं। सामान्य बोल-चालकी

भाषामें इसे ही खुनका थक्का कहते हैं। इस तरह ये

सुरक्षा-प्रणालीको तैयार करनेमें भी प्लेटलेट्सकी महत्त्वपूर्ण

भूमिका होती है। जर्मनीके म्यूनिख विश्वविद्यालयके

शोधकर्तादलने अपने शोध परिणामके आधारपर बताया है

कि ये शरीरमें प्रवेश करनेवाले बैक्टीरियाको अपनेमें खींच

लेते हैं और उन्हें लेकर तिल्लीमें चले जाते हैं, जहाँ 'भक्षण

शरीरमें प्लेटलेट्सके स्तरमें तेजीसे गिरावट आने लगती

है। अत: डेंगूसहित इस प्रकारके अन्य संक्रामक बुखारवाले

मरीजके रक्तमें प्लेटलेट्सकी सुरक्षा एवं वृद्धि उपचारका

एक अनिवार्य पक्ष है। आधुनिक चिकित्सा एलोपैथीमें

प्लेटलेट्स बढ़ानेका एकमात्र उपाय रक्तमें अलगसे

प्लेटलेट्सका चढ़ाया जाना ही है, जो खर्चीला और जटिल

चिकित्सकीय कार्य है। इसके अलावा प्लेटलेट्स आसानीसे

मिलता भी नहीं; क्योंकि यह बहुत कम समयतक ही

टिका रहता है। प्लेटलेट्सकी इस समस्याका हल आयुर्वेदमें

अत्यन्त आसान और सरल है।

डेंगू, मलेरिया, वायरल बुखार और मस्तिष्क ज्वरसे

कोशिकाओं' द्वारा उन्हें खत्म कर दिया जाता है।

आधुनिक खोजोंसे पता चला है कि शरीरकी सम्पूर्ण

रक्तवाहिकाओंमें होनेवाली क्षतिको रोक देते हैं।

मरीजोंकी प्राणरक्षा करनेमें सफलता पायी है।

आयुर्वेदिक चिकित्सकोंने डेंगू बुखारकी जटिल एवं

व्ययसाध्य उपचार-व्यवस्थासे निजात दिलाते हुए डेंगुके

इलाजका जो आसान, सस्ता और अत्यन्त कारगर चिकित्सा-

विकल्प प्रदान किया है, वह इस प्रकार है—डेंगूके मरीजका

आयुर्वेदिक चिकित्सक अमृता (गिलोय), घृतकुमारी, पपीतेकी पत्ती और कालमेघ-जैसी जड़ी-बृटियोंसे अत्यन्त

सफलतापूर्वक उपचार कर रहे हैं। इसके उपचारार्थ ताजे

गिलोयकी डण्डी, पपीतेकी पत्ती और कालमेघके पत्तोंसे

बना काढ़ा और घृतकुमारीका रस या गूदा दिनमें चार बार

देना चाहिये। ये चारों औषधीय वनस्पतियाँ सर्वत्र आसानीसे

मिल जाती हैं। इनमेंसे गिलोय तथा कालमेघकी गोलियाँ

और घृतकुमारीका तैयार रस भी बाजारमें आसानीसे पर्याप्त

मात्रामें मिल जाता है और पपीतेकी प्राप्ति भी अत्यन्त

सुगम है। उपर्युक्त औषधियोंको डेंगूके मरीजको देनेके

अलावा उसे कम-से-कम चार-छ: लीटर पानी दिनभरमें

देना जरूरी रहता है। पानी उबालकर किसी बर्तनमें एक

साथ रख लेना चाहिये और उसे मरीजको थोडे-थोडे

अन्तरालपर देते रहना चाहिये। इस जलमें थोडी मात्रामें

ग्लुकोज मिलानेसे रोगीको अतिरिक्त शक्ति मिलती है।

डेंगूके रोगीको सुपाच्य और ताजा भोजन दिया जाना चाहिये।

मरीजको आसानीसे हजम होनेवाले फल और पोषक तत्त्व

भी देना चाहिये। पपीतेके फलकी सब्जी, उबला पपीता,

पपीतेका पका फल इस बीमारीमें विशेष उपयोगी है। डेंगुके

ज्वरसे मुक्ति पा लेनेके बाद लीवरपर पडे इसके प्रभावके

निराकरणके लिये तीन माहतक कालमेघ लेते रहना चाहिये

तथा पपीतेके फलका नियमित सेवन करना चाहिये। मिर्च-

मसाले, चिकनी चीजें और तेल, घी कम-से-कम लेना

चाहिये। इससे रोगीका लीवर स्वस्थ हो जाता है।

संत-चरित-

रामदास काठियाबाबा

(श्रीरामलालजी)

रामदास काठियाबाबा



संख्या १२]

उनकी ओर देखकर कहा—'राम-नामका जप करो।

उस समय केवल चार वर्षके थे। वे खेलते-खेलते परमहंसजीके पास पहुँच गये। परमहंसजीने बड़े ध्यानसे

सुख और शान्तिकी प्राप्ति होती है।' परमहंसजीके कथनका चार वर्षके बालकपर अमिट प्रभाव पड़ा। वे उनके कथनके अनुसार एकान्तमें बैठकर नित्य रामनामका

जप करने लगे। माता-पिताको संतानकी भक्तिमयी रुचिपर बड़ा

संतोष हुआ। इनमें बचपनसे ही साधु-संतोंके प्रति अनुरागका भाव जाग्रत् होने लगा। सात वर्षकी अवस्थातक

वे भैंस चराया करते थे। तबतक उनका उपनयन-संस्कार नहीं हुआ था।

एक दिन भैंस चराते समय उन्हें एक महात्माके दर्शन हुए। महात्मा बहुत भूखे थे। उन्होंने काठियाबाबासे कुछ खानेके लिये माँगा। वे दौड़कर घर गये और आटा,

रामका नाम लेनेसे मनुष्य बड़ा बनता है। राम-नामसे

घी आदि लाकर उन महात्माजीकी सेवामें अर्पित कर दिया। महात्माने उन्हें आशीर्वाद दिया कि 'एक दिन तुम बहुत बड़े योगी होओगे और जीवमात्रको सन्मार्गपर लगाओगे।'

उपनयन-संस्कार हो जानेपर पिताने उनको ग्रामसे थोड़ी ही दूरपर एक विद्यालयमें अध्ययन करनेके लिये

भेजा। काठियाबाबा अध्ययनकालमें भी राम-नामकी जप-संख्या बढ़ाते गये। उनमें वैराग्यका उदय होने लगा। अठारह वर्षकी अवस्थामें शिक्षा पूरी करके घर लौटनेपर माता-पिताने उनके विवाहका विचार किया।

रामदास काठियाबाबाके स्मरणमात्रसे एक ऐसे संतका चित्र अपने सम्मुख अभिव्यक्त हो उठता है, जिनकी सघन भूरी-भूरी जटाएँ हैं, शरीर अम्बरहीन तथा भस्मलेपसे विभूषित है, वक्ष:स्थलतक लम्बी दाढ़ी फहरा रही है और कमरमें जंजीरसे बँधी हुई काठकी लंगोटी तथा हाथमें विशाल कमण्डल शोभा पा रहा है। काठियाबाबा साधना, तपस्या, संयम-नियम, वैराग्य और जीवमात्रके प्रति दयाकी तो मानो साक्षात् मूर्ति ही थे। वे एक सच्चे संन्यासी थे। उनका जीवन संतोंके प्रति असाधारण अनुराग और सेवाका अद्भुत सम्मिश्रण था।

वे विक्रमीय सम्वत् १९१४ (सन् १८५७ ई०)-के प्रथम

स्वाधीनता-संग्रामके समय उपस्थित थे। उस समय भी उनकी अवस्थाका अनुमान लगाना कठिन था। पंजाब प्रदेशके अमृतसर जनपदमें लोनाचमारी ग्रामके सन्निकट एक ग्राममें रामदास काठियाबाबाने सम्वत् १८०३ वि० के लगभग जन्म लिया था। उनके

पिता बड़े सदाचारी और भगवन्निष्ठ ब्राह्मण थे। उनका स्वभाव अत्यन्त धार्मिक था।

उस गाँवमें एक परमहंसजी रहते थे। वे एक पेडके नीचें बिरुक्र भगविन्कर भेजन करते पछे : //dec.gg/dharma | MADE WITH | QVE BY Avinash/Shi

की कि 'वैवाहिक जीवनमें मेरा मन तनिक भी नहीं लगेगा; क्योंकि मुझे राम-नामके जपमें जो रस मिलता

काठियाबाबाने विनम्रता और सरलतापूर्वक उनसे प्रार्थना

है, उसकी प्राप्ति भोगोंमें कभी भी सम्भव नहीं है।'

भाग ९० समय साधन-भजनमें बीतने लगा, इससे उनकी संसारके युवती कुल-वधू कभी-कभी अकेली उनका दर्शन करने प्रति रही-सही आसक्ति भी मिट गयी। आया करती थी। महाराजने उसे आनेसे मना किया, पर वह किसी भी तरह न मानती थी। अचानक ही महाराज काठियाबाबाकी गायत्री-मन्त्रमें बडी श्रद्धा थी। उन्होंने गायत्री-मन्त्रका जप आरम्भ किया। उनकी श्रद्धा गाँवसे चले गये और फिर कभी वहाँ न आये। वे संयम-और भक्तिके प्रसन्न तथा सन्तुष्ट होकर गायत्री-माताने नियमके बड़े कट्टर थे। वे कहा करते थे—'भगवान् सदा उनको साक्षात् दर्शन दिया। माँ गायत्रीने उनको ज्वालामुखी छायाकी तरह साथ रहकर अपने भक्तोंकी रक्षा करते जाकर पचीस हजार मन्त्रोंके जपका आदेश दिया। वे हैं।' तुरंत ज्वालामुखीके लिये चल पड़े। ज्वालामुखीके मार्गमें वे पुन: अपने गुरुदेवके सन्निकट गये और एक बड़े सिद्ध महात्मासे उनकी भेंट हुई। वे निम्बार्क-उन्हींकी शरणमें रहकर तप करने लगे। वे इस बातपर दृढ़ विश्वास करते थे कि सद्गुरुकी कृपासे मुक्ति अवश्य सम्प्रदायके संत देवदास थे। उन्होंने काठियाबाबापर कुपा करके संन्यासाश्रममें दीक्षित कर लिया। वे वैराग्यपूर्वक ही प्राप्त हो सकती है। वे अपने गुरुके चरणदेशमें अपने गुरुके पास रहकर भजन करने लगे। इस अप्रतिम श्रद्धा रखते थे। एक बार उनके गुरुदेव समाचारसे उनके माता-पिता बहुत क्षुब्ध हुए। पिताने उत्तराखण्डमें तप कर रहे थे। वे कुटीके भीतर थे और संत देवदासके चरणोंमें निवेदन किया कि 'यह बालक काठियाबाबा बाहर धूनी ताप रहे थे। रातमें बर्फ गिरनेसे धूनीकी आग ठण्डी हो गयी। काठियाबाबाने कुटीके मेरी पत्नीके प्राणोंका आधार है, अत: इसको आप घरपर ही रहकर भजन करनेका आदेश दे दीजिये।' भीतर जाकर गुरुके तप, मानसिक शान्ति तथा एकान्त साधनामें विघ्न नहीं उपस्थित करना चाहा, वे कुटीके गुरुकी आज्ञासे काठियाबाबा घरपर ही रहकर तप और साधना करने लगे; पर माताकी ममता और सामने ही पड़े रहे। रातकी नीरवता और भयानक वात्सल्यमयी विकलता साधनामें विघ्न सिद्ध हुई। तब वे शीतकालमें भी वे विचलित न हुए। उनका शरीर ठण्डकसे काँप रहा था। जब गुरुदेव बाहर आये तो घरसे थोडी दुरपर एक वट-वृक्षके नीचे रहकर भजन करने लगे। वे भिक्षा माँगकर जीवन-निर्वाह करते हुए उनकी निष्ठा देखकर बहुत प्रसन्न हुए। तत्पश्चात् वे भगवान्की भक्तिमें लगे रहते थे। एक दिन सहसा वे धूनी जलानेके लिये अन्दरसे आग लेकर सहज शान्तिकी अपने घरपर पहुँच गये और दरवाजेपर खड़े होकर मुद्रामें पुन: अपने स्थानपर आकर पूर्ववत् भजनमें तत्पर उन्होंने भिक्षाके लिये आवाज लगायी। भिक्षा लेकर हो गये। बाहर आते ही माताने पुत्रको साध्वेशमें देखा तो उनके एक दिन गुरुदेवने आदेश दिया कि 'मैं एक नयनोंसे अश्रु-धारा प्रवाहित हो उठी और कण्ठ अवरुद्ध स्थानपर जा रहा हूँ। मैं जबतक लौट न आऊँ, तुम इसी आसनपर बैठे रहना, कहीं अन्यत्र मत जाना।' दैवयोगसे हो गया। किसी तरह मातासे भिक्षा लेकर रामदास काठियाबाबा वट-वृक्षके नीचे आये। उसी दिन उन्होंने महात्मा देवदास आठ दिनके बाद लौट सके। गाँव छोड़ देनेका दृढ़ निश्चय कर लिया। काठियाबाबाको उसी आसनपर अडिग देखकर वे बहुत संन्यस्त जीवनमें सबसे बड़ा विघ्न कामिनी और प्रसन्न हुए और बोले—'तुम्हें इस निष्ठाके फलस्वरूप किसी-न-किसी दिन इसी जीवनमें भगवान्का साक्षात्कार कंचनसे होता है, इसलिये संत-महात्मा इन दोनोंकी ओर कभी आँख उठाकर नहीं देखते। नि:सन्देह ये दोनों प्राप्त होगा।' पतनकी ओर ले जानेवाले हैं। वट-वृक्षके नीचे एक वे अपने गुरुके आदेशसे द्वारका गये। द्वारकासे

संख्या १२] रामदास क	•
<u> </u>	
लौटनेपर अपने गुरुदेवको न पाकर वे बहुत चिन्तित हुए।	एक बार उन्होंने पंचाग्नि तापनेकी इच्छा प्रकट
वे गुरुको साक्षात् भगवान् समझते थे। उन्होंने गुरु-	की। एक साधुने ईर्घ्यावश उनके चारों ओर हजार कण्डे
भाइयोंसे कहा कि 'गुरु महाराज तो सर्वशक्तिमान् हैं,	जला दिये। लोग घबरा गये कि न जाने इस पंचाग्निका
उनकी मृत्यु नहीं हो सकती।' उनके वचनकी रक्षा करते	क्या परिणाम होगा! काठियाबाबा पंचाग्नि-तपकी इस
हुए गुरुदेवने एक दिन उनको प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा	कठिन परीक्षामें भी अविचल रहे। उनका बाल भी बाँका
कि 'मैंने चोला (शरीर) नहीं छोड़ा है, आत्मगोपन	न हो सका।
किया है। मैं नर्मदाके तटपर किसी विशेष कारणसे	काठियाबाबाका जीवन तपस्या-प्रधान था। वे
निवासकर तप कर रहा हूँ। समय-समयपर तुम्हें दर्शन	कहा करते थे—'रातके चौथे प्रहरसे ही निद्राका
देता रहूँगा।'	परित्यागकर भगवान्का भजन करना चाहिये। निन्दा
गुरु साक्षात् ज्ञान-विग्रह हैं। रामदास काठियाबाबा	और स्तुतिसे परे रहकर सत्कर्ममें लगे रहना चाहिये।'
गुरु-कृपाके विशेष पात्र थे। वे प्राय: कहा करते थे कि	गुरुकी शरणागतिपर काठियाबाबा बड़ा जोर देते थे।
'आलस्य छोड़कर भगवान्की भक्ति और साधु–सन्तोंकी	कहा करते थे कि 'गुरुके चरणाश्रयसे अन्त:करण
सेवा करनी चाहिये। गृहस्थ और संन्यासी—दोनों समान	शुद्ध होता है, माया और अविद्याके अन्धकारका
रूपसे भगवत्प्राप्तिके अधिकारी हैं।' उन्होंने गुरुके	नाश और भगवत्प्रकाशका उदय होता है।' सद्गुरुकी
अन्तर्धान होनेके बाद समस्त भारतके तीर्थोंकी अनेक	कृपामें विश्वास ही उनकी साधनाका स्वरूप था।
बार पैदल यात्रा की। गुरुदेवके आशीर्वादके फलस्वरूप	तपको उन्होंने साधनाके क्षेत्रमें बड़ा महत्त्व दिया है। यह
उन्हें भरतपुर राज्यके सैलानी-कुण्डपर भगवान्का साक्षात्	उनका दृढ़ सिद्धान्त था कि भगवान्का भजन ही
दर्शन हुआ। काठियाबाबाकी इस सम्बन्धमें स्वीकृति	जीवनका श्रेय है।
है—	भरतपुरके सैलानी-कुण्डपर कुछ दिनोंतक तप
'रामदासको राम मिले हैं, सैलानीके कुंडा।'	करनेके बाद वे वृन्दावनमें निवासकर भगवान्का भजन
संतकी पहचान सूक्ष्म बुद्धिसे भी नहीं होती, यह	करने लगे। साधु-महात्माओंकी सेवामें उनको बड़ा रस
तो उनकी प्रसन्नता और कृपासे ही सम्भव है।	मिलता था। अत: वे दावानल-कुण्डपर रहकर तपोमयी
सम्वत् १९१४ वि० की बात है। भारतीय	साधनामें लग गये। नित्य जंगलसे तीन-चार मन लकड़ी
्याः स्वाधीनताके प्रथम संग्रामका समय था। काठियाबाबा	काट लाते थे और उसका बड़ी नि:स्पृहतासे सन्तोंकी
यमुनाके तटपर विचरण करते हुए आगरा जा रहे थे।	सेवामें उपयोग करते थे। वे यमुनाके तटपर एकान्त
गोरे सिपाहियोंने समझा कि कोई विद्रोही वेष बदलकर	स्थानमें आसन लगाकर भजन करनेमें परमानन्दका
भाग रहा है। उन्होंने दो बार गोली चलायी, किंतु	अनुभव करते थे। बंगालके प्रसिद्ध महात्मा विजयकृष्ण
महाराज बच गये। तीसरी बार गोली चलाते समय	गोस्वामी अपने वृन्दावन-निवास-कालमें कभी-कभी
बन्दूक हाथसे नीचे गिर पड़ी। तब सिपाहियोंने उनकी	इनके सत्संग और दर्शनके लिये आते रहते थे। वृन्दावनके
महत्ता समझी और चरण-धूलि ली। महाराज अपने	संत-महात्माओंमें काठियाबाबा 'व्रजविदेही' नामसे प्रसिद्ध
विचरणमें मस्त थे। इस घटनाका उनके मनपर कुछ भी	थे। सम्वत् १९२० वि० में यमुनाके तटपर वे योगासनसे
प्रभाव न पड़ा।	समाधिस्थ हो गये।
ווֹפָּא ו' אוּדּא ———•••	जनापर्य हा ग्या

साधनोपयोगी पत्र आप ही अपना मित्र है और जिसके द्वारा नहीं जीते हुए

रखा है।'

िभाग ९०

जैसा अभ्यास होता है, मन वैसा ही बन जाता है।

दोषदर्शनका अभ्यास हो जानेपर बिना ही हुए लोगोंमें दोष दीखने लगते हैं, इसलिये यह तो कठिन है कि इस

पत्रके पढ़ते ही आपको दूसरोंके दोष दीखने बन्द हो

जायँ। ऐसा हो जाय तो बडे ही आनन्दकी बात है, परंतु

आशा कम है। अतएव आप शान्ति और धीरजके साथ

(8) अपने दोषोंपर विचार करो हैं, उसने आप ही अपने साथ शत्रुकी तरह वैर ठान

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र

मिला। आपने अपने दु:खके जो कारण लिखे, वे तो

बाहरी हैं। असली कारण तो आपका अपना उच्छुंखल

मन ही है। जो मनुष्य दूसरोंके प्रति मनमें बुरे भावोंका

पोषण करता है, उसको दूसरोंसे बुरे भाव-प्रतिहिंसा,

वैर आदि मिलनेका भय लगा ही रहता है। वह आप

ही अपने लिये दु:खोंको बुलाता है। इतना ही नहीं, वह

जगत्में भी दु:ख ही फैलाता है। जिसके अन्दर जैसे विचार या भाव होते हैं, उसके वचनोंसे, आकृतिसे,

भावभंगीसे वही विचार प्रतिक्षण बाहर निकलते रहते हैं। उसके रोम-रोमसे स्वाभाविक ही वैसे ही परमाणु प्रकट

हो-होकर दूर-दूरतक फैलते हैं और न्यूनाधिकरूपसे सबपर अपना प्रभाव डालते हैं। सजातीय विचारवालोंपर अधिक और विजातीय विचारवालोंपर कम। जैसे प्लेग,

चेचक और हैजे आदि रोगोंके कीटाणु सर्वत्र फैलकर रोग फैला देते हैं, वैसे ही मनुष्यके अन्दर रहनेवाले घृणा, द्वेष, भय, वैर, शोक, विषाद, चिन्ता, क्रोध, काम,

लोभ, डाह आदि मानसिक रोगोंके परमाणु भी सर्वत्र फैलकर लोगोंको रोगी बनाते हैं। आपके घरमें जो कलह

है, इसमें केवल दूसरे पक्षका ही दोष हो, ऐसी बात नहीं माननी चाहिये और वस्तृत: ऐसा है भी नहीं, उसमें

आपका भी दोष है और वहीं कलह फैलाकर आपको और घरके दूसरे लोगोंको दुखी बना रहा है। भगवान्ने

गीतामें कहा है—

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥ बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्॥

'आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु

है। जिसके द्वारा मन, वाणी आदि जीते हुए हैं, वह तो

(६।५-६)

अपने दोषोंको भी खोजने और देखनेका प्रयत्न कीजिये। जहाँ अपने दोष दीखने लगेंगे, वहीं दूसरोंके दोष दीखने कम होने लगेंगे। फिर आगे चलकर यह दशा हो जायगी—

बुरा जो देखन मैं गया बुरा न दीखा कोय। जो तन देखा आपना मुझ-सा बुरा न कोय॥ और जब दूसरोंके दोषकी बात याद ही न रहेगी

और सब तरहसे अपने ही दोष—अपराध प्रत्यक्ष सामने रहेंगे, तब तो स्वाभाविक ही अपने दोषोंके लिये पश्चात्ताप होगा और नम्रतापूर्वक सबसे क्षमा चाहनेकी

प्रवृत्ति बलवती हो उठेगी। चैतन्य महाप्रभुसे दया पाये हुए जगाई-मधाईका अन्तिम जीवन रो-रोकर सबसे क्षमा चाहनेमें ही बीता था। वे पश्चात्ताप और करुणाकी

मूर्ति ही बन गये थे। आपसे प्रेम है और आप मेरे कहनेको बुरा न

मानकर उसे अच्छी दृष्टिसे देखेंगे तथा विचार करेंगे, यही समझकर आपको इतना लिखनेका साहस किया

गया है। शेष प्रभुकृपा। (२) सर्वत्र सबमें भगवानुको देखो

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपके कई पत्र

मिल चुके। मेरा स्वाभाविक आलस्य आप जानते ही हैं। इसके सिवा इधर कामकी भी कुछ भीड रही। सर्वत्र सबमें भगवान्को देखनेका प्रयत्न करना और यथासाध्य

संख्या १२] साधनोपयोगी पत्र ३९	
**************************************	**************************************
अधिकाधिक भगवान्का स्मरण करना एवं स्मरण	हृदयोंको भी लजा देनेवाला परमात्माका स्नेह-स्रोत
होनेपर न भूलनेकी चेष्टा करना—ये बड़े ही उत्तम	उमड़ता दिखलायी देगा और तुम उसके प्रवाहमें आनन्दरूप
साधन हैं। सर्वत्र सबमें परमात्माको देखनेके साधनसे	होकर बह जाओगे। हालत खराब है तो क्या है? लाख
बहुत ही शीघ्र जीवन पलट सकता है। पाप, ताप, छल,	वर्षकी अँधेरी कोठरी प्रकाश आते ही प्रकाशित हो जाती
द्रोह, दम्भ, वैर आदिका आप ही नाश हो जाता है। जो	है। वह लाख वर्षकी अपेक्षा नहीं करती। इसी प्रकार
सामने आया, तत्काल उसीमें भगवान् हैं, ऐसा स्मरण हो	भगवान्के शरण होते ही सारे पाप तुरंत भस्म हो जाते
आनेसे उसके साथ दूषित बर्ताव हो ही नहीं सकता।	हैं। मनमें दृढ़ता धारणकर भगवान्का स्मरण करो और
नाटकमें नाटकका स्वामी या अपना साक्षात् पिता भी	अपनेको सर्वतोभावसे उनके चरणोंपर न्योछावर कर
शिष्य बनकर आ सकता है। उसको स्वामी या पिता	देनेकी चेष्टा करो। उनकी दयालुतापर विश्वास करो
पहचानते हुए जो शिक्षकका नाट्य किया जाता है, वह	और यह दृढ़ धारणा कर लो कि 'मैं उनका हूँ, उनका
स्वामीके आज्ञानुसार लीलावत् ही होता है। उसमें दोष	अभय हस्त मेरे मस्तकपर सदा ही टिका हुआ है।' यह
प्राय: आ ही नहीं सकता। इसी प्रकार आप भी	भावना जितनी ही बढ़ेगी, उतना ही आनन्द बढ़ेगा।
विद्यार्थियोंको पढ़ाते समय 'उनमें भगवान् हैं या स्वयं	नाम-जपमें मन ऊबता है तो जबरदस्ती कड़वी दवाकी
भगवान् ही उन स्वरूपोंमें प्रकट हो रहे हैं', ऐसा	भाँति ही उसका नियमपूर्वक सेवन करो। भगवान्के
समझकर उन्हें पढ़ाइये। यही व्यवहार घरके लोगों,	बलपर मनमें धीरज रखो। आचरणोंको उज्ज्वल बनानेकी
मित्रों, सम्बन्धियों, नौकरों आदिके साथ कीजिये तो	कोशिश करो। शेष प्रभुकृपा।
बहुत ही शीघ्र समस्त दोषोंका ध्वंस सम्भव है। चित्तमें	(8)
अपूर्व शान्ति और आनन्द तो इस साधनके संगी ही हैं।	प्रार्थना भगवान् अवश्य सुनते हैं
'वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।' दूसरोंके	प्रिय महोदय, सप्रेम हरिस्मरण! आपका एक पत्र
साथ बुरा बर्ताव, विषम व्यवहार तभीतक होता है,	गोरखपुर कार्यालयसे प्राप्त हुआ, जिसमें आपने प्रतिकूल
जबतक हम उन्हें आत्मासे अतिरिक्त कोई दूसरा समझते	समस्याओंकी चर्चा की। अपने पूर्वजन्मोंमें स्वयं अपने
हैं। जब हम यह देखेंगे कि ये सब तो हमारे आत्मा ही	द्वारा किये गये कर्मोंके अनुसार जीवनमें अनुकूलता तथा
हैं, तब बुरा बर्ताव कैसे होगा? अपने प्रति क्या कभी	प्रतिकूलता आती है। प्रतिकूलता अपने द्वारा किये गये
कोई बुरा बर्ताव करता है ? फिर, जब वे हमें भगवान्	पापका फल है; इसलिये इसे परिस्थितिवश सहन करना
दीखेंगे, तब तो हमारे पूज्य और सब प्रकारसे सेवाके पात्र	पड़ता है। यद्यपि इसके निराकरणके लिये अपनी
बन जायँगे। शेष प्रभुकृपा।	विवेक-बुद्धिके अनुसार प्रयास करना चाहिये, परंतु
(₹)	इसका अन्तिम समाधान यह है कि इससे उबरनेके लिये
पतित होकर पतितपावनको पुकारे!	बिना विचलित हुए परमात्मप्रभुसे प्रार्थना की जाय। इसी
भाई! तुम इतना घबड़ाते क्यों हो? परमात्माकी	उद्देश्यसे निरन्तर भगवान्के नामका जप तथा एकान्तमें
असीम दयालुतापर विश्वास करो। हम पतित हैं तो क्या	प्रभुसे आर्तभावसे प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना भगवान्
हुआ, वे तो 'पतितपावन' हैं। सचमुच पतित बनकर	अवश्य सुनते हैं। मनकी शान्तिके लिये गीताप्रेसद्वारा
पतितपावनको पुकारो—अशरण होकर अशरणशरणकी	प्रकाशित सत्साहित्यका अध्ययन अत्यन्त कल्याणकारी
शरण हो जाओ । फिर देखो — करोडों स्नेहमयी जननी dh	arma MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

व्रतोत्सव-पर्व

शुक्र शनि

सोम

मंगल

बुध

गुरु

शुक्र

शनि

मघा

स्वाती अहोरात्र

प्रतिपदा दिनमें ३।५४ बजेतक

द्वितीया '' २। ४३ बजेतक

तृतीया "१।५८ बजेतक रिव

चतुर्थी 🕠 १। ४३ बजेतक

पंचमी 🤊 १।५८ बजेतक

षष्ठी 🦙 २।४७ बजेतक

सप्तमी सायं ४।१ बजेतक

अष्टमी*"* ५।४२ बजेतक

नवमी रात्रिमें ७।४२ बजेतक

तिथि

प्रतिपदा रात्रिशेष ५। ४६ बजेतक शािन

द्वितीया 😗 ५। २७ बजेतक 🔀 रिव

तृतीया रात्रिमें ४। ३९ बजेतक सोम

चतुर्थी 🗤 ३ । २५ बजेतक 🗗 मंगल

पंचमी ''१।५१ बजेतक|बुध

पूर्णिमा रात्रिशेष ५।५० बजेतक

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, माघ कृष्णपक्ष

नक्षत्र दिनांक

तिथि

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

पुष्य रात्रिमें १।३३ बजेतक |१३ जनवरी मूल रात्रिमें १।३३ बजेसे। भद्रा रात्रिमें २। २१ बजेसे, सिंहराशि रात्रिमें १। १० बजेसे,

आश्लेषा 🕶 १। १० बजेतक | १४ 🕠 मकरसंक्रान्ति दिनमें १। ४८ बजे, खिचड़ी, खरमास समाप्त,

शिशिर-ऋतु प्रारम्भ, सूर्य उत्तरायण।

🗤 १।१४ बजेतक |१५ 🕠

भद्रा दिनमें १। ५८ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीवृत, चन्द्रोदय

रात्रिमें ८। ३२ बजे, मूल रात्रिमें १। १४ बजेतक।

पू० फा० '' १।४९ बजेतक |१६ ''

कन्याराशि दिनमें ८।५ बजेसे। उ० फा० ११२।५४ बजेतक १७ 🕠

भद्रा दिनमें २। ४७ बजेसे रात्रिमें ३। २५ बजेतक।

११४। २७ बजेतक १८ 🕠

तुलाराशि सायं ५। २८ बजेसे, श्रीरामानन्दाचार्य-जयन्ती। चित्रा रात्रिशेष ६ । २८ बजेतक | १९ 🕠

सायन कुंभराशिका सूर्य दिनमें ८। ४८ बजे। २० ,, स्वाती दिनमें ८।४८ बजेतक २१ 🕠 **वृश्चिकराशि** रात्रिमें ४। ४४ बजेसे।

भद्रा दिनमें ८। ४६ बजेसे रात्रिमें ९। ५१ बजेतक। दशमी 🗥 ९ । ५१ बजेतक रवि विशाखा '' ११।२१ बजेतक |२२ '' एकादशी ᢊ १२। ० बजेतक सोम अनुराधा 😗 १।५९ बजेतक |२३ षष्ट्तिला एकादशीव्रत (सबका), मूल दिनमें १। ५९ बजेसे।

ज्येष्ठा सायं ४। २९ बजेतक | २४ 🕠 धनुराशि सायं ४। २९ बजेसे, श्रवणका सूर्य दिनमें ८। ४४ बजे। मंगल

द्वादशी 🦙 १।५७ बजेतक त्रयोदशी <table-cell-rows> ३। ३७ बजेतक मुल रात्रिमें ६।४४ बजेतक २५ 🕠 भद्रा रात्रिमें ३। ३७ बजेसे, प्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें ६। ४४ बजेतक। बुध ग्रु **भद्रा** सायं ४। १२ बजेतक, **मकरराशि** रात्रिमें २। ५७ बजेतक,

चतुर्दशी रात्रिशेष ४।४८ बजेतक पू० षा० 🗤 ८। ३५ बजेतक | २६ 🕠

गणतन्त्र-दिवस।

अमावस्याः ५ ।३२ बजेतक । शुक्र । उ० षा० ११ १० । ० बजेतक । २७ 🕠 मौनी अमावस्या।

दिनांक

२९ "

३० "

३१ "

१फरवरी

2 "

3 "

8 "

4 "

ξ "

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

षष्ठी 😗 ११ । ५५ बजेतक | गुरु रेवती 😗 ८। ४२ बजेतक सप्तमी 🕶 ९ । ४६ बजेतक शुक्र अश्विनी 🗤 ७। १६ बजेतक शनि अष्टमी 🗤 ७। २९ बजेतक भरणी सायं ५। ४१ बजेतक

नवमी सायं ५।७ बजेतक रवि कृत्तिका ११४।० बजेतक

दशमी दिनमें २।४५ बजेतक सोम

एकादशी 😗 १२। २९ बजेतक ौ मंगल 🖁 मृगशिरा 😗 १२। ४६ बजेतक

द्वादशी ''१०।२२ बजेतक बुध आर्द्रा ११ ११ । २० बजेतक पुनर्वसु 🗤 १०। ११ बजेतक त्रयोदशी 😗 ८। ३१ बजेतक 🕂 गुरु चतुर्दशी प्रातः ६ । ५९ बजेतक शुक्र पुष्य '' ९। २२ बजेतक

रोहिणी दिनमें २।२१ बजेतक

नक्षत्र

धनिष्ठा '' ११।२० बजेतक

शतभिषा 🕶 ११। १६ बजेतक

पू० भा० ११ १०। ४५ बजेतक

उ० भा० ११ ९। ५४ बजेतक

श्रवण रात्रिमें १०।५६ बजेतक | २८जनवरी

सूर्य दिनमें १०।५६ बजे। 9 11 ८ 11 9 11

20 11

भद्रा दिनमें १२। २९ बजेतक, जया एकादशीव्रत (सबका)। कर्कराशि रात्रिमें ४। २८ बजेसे, प्रदोष्रवत। बजेसे, **माघी पूर्णिमा, माघ स्नान समाप्त।**

मीनराशि सायं ४।५२ बजेसे।

महानन्दानवमी।

वसन्तपंचमी, मूल रात्रिमें ९। ५४ बजेसे।

भद्रा प्रातः ६।५९ बजेसे रात्रिमें ६।२४ बजेतक, मूल दिनमें ९।२२

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

कुम्भराशि दिनमें ११।८ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ११।८ बजे।

भद्रा सायं ४। २ बजेसे रात्रिमें ३। २५ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।

मेषराशि रात्रिमें ८।४२ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ८।४२ बजे।

मुल रात्रि ७।१६ बजेतक, **भद्रा** रात्रि ९।४६ से, **रथसप्तमी, अचलासप्तमी।**

भद्रा रात्रिमें १।३८ बजेसे, मिथुनराशि रात्रिमें १।३४ बजेसे, धनिष्ठाका

भद्रा दिनमें ८। ३७ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें ११। १६ बजेसे।

व्रतोत्सव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व

१९ ,,

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष

तिथि नक्षत्र दिनांक मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि आश्लेषा दिनमें ८।५३ बजेतक |११फरवरी | सिंहराशि दिनमें ८।५३ बजेसे। प्रतिपदा रात्रिशेष ५।७ बजेतक शनि द्वितीया 🕖 ४। ५३ बजेतक रवि · । ५२ बजेतक | १२ कुंभ-संक्रान्ति रात्रिमें १२। ३२ बजे, मूल दिनमें ८। ५२ बजेतक। भद्रा सायं ५।१ बजेसे रात्रिशेष ५।१० बजेतक, कन्याराशि दिनमें तृतीया 🕖 ५। १० बजेतक सोम पु० फा० '' ९।१८ बजेतक १३ ''

३।३३ बजेसे।

चतुर्थी 🤊 ६।१ बजेतक मंगल उ० फा० 🗤 १०।१७ बजेतक |१४ 🕠 पंचमी अहोरात्र बुध 🕠 ११।४६ बजेतक १५ 🕠 हस्त पंचमी प्रात: ७।१७ बजेतक

संख्या १२]

चित्रा '' १।४० बजेतक १६ '' गुरु

षष्ठी दिनमें ८।५९ बजेतक स्वाती 😗 ३।५६ बजेतक शुक्र सप्तमी <table-cell-rows> १०।५८ बजेतक शनि

अष्टमी "१।६ बजेतक रिव अनुराधा 😗 ९। ६ बजेतक

विशाखा रात्रि ६। २८ बजेतक | १८ 🕠

सोम

ज्येष्ठा ११११ ३८ बजेतक २० 🕠

नवमी 🕠 ३।१३ बजेतक मंगल

दशमी सायं ५।७ बजेतक मुल रात्रिमें १।५६ बजेतक २१ 🕠

बुध

एकादशी रात्रिमें ६।४४ बजेतक पू० षा० '' ३।५५ बजेतक २२ '' द्वादशी " ७।५१ बजेतक गुरु उ० षा० रात्रिशेष ५ । २७ बजेतक | २३ 🕠 श्रवण अहोरात्र त्रयोदशी 🕖 ८। ३२ बजेतक शुक्र

श्रवण प्रातः ६। २८ बजेतक | २५ 🕠 शनि

चतुर्दशी <table-cell-rows> ८। ४२ बजेतक

अमावस्या 🗥 ८ । १९ बजेतक | रवि | धनिष्ठा 🗥 ६ । ५९ बजेतक | २६ 🕠

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

तिथि वार नक्षत्र शतभिषा प्रातः ७। २ बजेतक

प्रतिपदा रात्रिमें ७। २८ बजेतक सोम द्वितीया सायं ६ । ११ बजेतक मिंगल

पु०भा० "६। ३६ बजेतक उ० भा० रात्रिशेष ५।५० बजेतक रेवती ¹¹ ४। ४३ बजेतक

तृतीया 😗 ४। ५७ बजेतक बुध चतुर्थी दिनमें २। ३५ बजेतक गुरु अश्विनी रात्रिमें ३।२० बजेतक

भरणी '' १। ४६ बजेतक

पंचमी ग१२।२६ बजेतक शुक्र षष्ठी 😗 १०।६ बजेतक शनि कृत्तिका '' १२।६ बजेतक

रोहिणी '' १०। २६ बजेतक सप्तमी प्रात: ७।४३ बजेतक रिव

मृगशिरा ११८।४९ बजेतक

दशमी 😗 १२।५६ बजेतक मंगल ¹¹ ७। २२ बजेतक आर्द्रा

पुष्य

अष्टमी रात्रिशेष ५। २० बजेतक नवमी रात्रिमें ३ । ३ बजेतक सोम

ब्ध

एकादशी 🕶 ११। ३ बजेतक

द्वादशी 😗 ९। ३२ बजेतक | गुरु

त्रयोदशी 😗 ८। २२ बजेतक | शुक्र

चतुर्दशी 😗 ७। ३९ बजेतक 🛛 शनि

पूर्णिमा 😗 ७।२५ बजेतक रिव

पुनर्वसु सायं ६।९ बजेतक

आश्लेषा 🕶 ४। ४२ बजेतक

पू० फा०'' ४।५५ बजेतक

🗤 ५। १६ बजेतक

🗤 ४। ३४ बजेतक

भद्रा दिनमें २। ३५ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल २ "

१ मार्च

3 "

8 11

4 "

ξ "

9 11

८ 11

9 "

१0 "

११ "

दिनांक

२८ "

२७फरवरी

भद्रा रात्रिमें ३।३५ बजेसे, **मेषराशि** रात्रिशेष ४।४३ बजेसे, **पंचक** समाप्त रात्रिशेष ४।४३ बजे।

अमावस्या।

तुलाराशि रात्रिमें १२। ४३ बजेसे।

भद्रा दिनमें ८। ५९ बजेसे रात्रिमें ९। ५८ बजेतक, रवियोग दिनमें ३। ५६ बजेतक।

भद्रा रात्रिमें ८। ३२ बजेसे, प्रदोषव्रत, महाशिवरात्रिव्रत।

भद्रा दिनमें ८। ३७ बजेतक, कुम्भराशि रात्रिमें ६। ४४ बजेसे,

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

वृषराशि दिनमें ७। २० बजेसे, पूर्वाभाद्रपदका सूर्य रात्रिमें ८। ६ बजे।

भद्रा दिनमें ७। ४३ बजेसे रात्रिमें ६। ३२ बजेतक, होलाष्टकारम्भ।

भद्रा दिनमें ११।५९ बजेसे रात्रिमें ११।३ बजेतक, कर्कराशि दिनमें

१२।२७ बजसे, आमलकी एकादशीव्रत (सबका), रंगभरी एकादशीव्रत।

भद्रा दिनमें ७। ३२ बजेतक, **कन्याराशि** रात्रिमें ११। ८ बजेसे,

पूर्णिमा, होलिकादाह सूर्यास्तके बाद रात्रिमें ७। २५ बजेके पहले।

भद्रा रात्रिमें ७। ३९ बजेसे, **मृल** सायं ४। ३४ बजेतक।

रवियोग दिनमें १। ४० बजेसे।

विजया एकादशीव्रत (सबका)।

मकरराशि दिनमें १०। १७ बजेसे।

पंचकारम्भ रात्रिमें ६। ४४ बजे।

मीनराशि रात्रिमें १२। ४३ बजेसे।

मूल रात्रिशेष ५।५० बजेसे।

रात्रिमें ३।२० बजेतक।

मिथुनराशि दिनमें ९। ३७ बजेसे।

सिंहराशि सायं ४। ४२ बजेसे, प्रदोषव्रत।

मूल सायं ५। १६ बजेसे।

९।६ बजेसे।

वृश्चिकराशि दिनमें ११।५० बजेसे, सायन मीनराशि का सूर्य रात्रिमें ८।४९ बजे। जानकी-जयन्ती, शतभिषाका सूर्य दिनमें २। ३३ बजे, मूल रात्रिमें **भद्रा** रात्रिमें ४। १० बजेसे, **धनुराशि** रात्रिमें ११। ३८ बजेसे। भद्रा सायं ५। ७ बजेतक, मूल रात्रिमें १। ५६ बजेतक।

संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीवृत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।२ बजे।

(8)

कृपानुभूति

हनुमान्जीकी जीवनदायिनी कृपा घटना २७ अक्टूबर २०१४ ई० की है, मैं अपने घर

शालीमार गार्डनसे हरिद्वार अपनी कारद्वारा आ रहा था। मैं सप्ताहके अन्तमें बच्चोंसे मिलने आता हूँ और पुन: सोमवारको

सुबह लगभग ५ बजे हरिद्वारको प्रस्थान करता हूँ। जब भी मैं कभी यात्रा प्रारम्भ करता हूँ तो श्रीहनुमानचालीसा पढ़ना मेरी

आदत है। इस बार हमारे साथ हमारे पडोसीके रिश्तेदार भी थे, जिन्हें मेरठ जाना था, आदतन मैंने गाड़ी स्टार्ट करते ही

श्रीहनुमानचालीसा पढ्ना प्रारम्भ कर दिया। साधारणतया मैं कारकी गति ५०-६० कि० मी० ही अधिकतम रखता हूँ और आज भी लगभग इतनी ही गतिसे

हम जा रहे थे। सहसा मैंने देखा कि एक खराब पेट्रोल टैंकर बीच सडकपर खडा है। यह देख मैंने गति कमकर गाडी रोक दी। तभी अचानक एक बड़ी कारने बहुत ही तेज गतिसे आकर हमें पीछेसे टक्कर मार दी, जिससे हम कारसहित टैंकरमें घुस गये। हमारी गाडी उसमें फँस गयी और पीछेसे

भी बरी तरहसे क्षतिग्रस्त हो गयी। हमारे निकलनेके सारे रास्ते बन्द हो गये, चारों खिडिकयाँ क्षितिग्रस्त होनेके कारण खुल नहीं रही थीं। अँधेरा एवं सुनसान होनेके कारण कोई हमारी करुण पुकार भी नहीं सुन पा रहा था। किंतु तभी एक

व्यक्ति आया और उसने हमारी कारका जो दरवाजा कम क्षतिग्रस्त था, बाहरसे खोला और हम बाहर निकले। मुझे बहुत ही मामूली चोट आयी और मेरे सहयोगीको बिलकुल नहीं। मैं तो मानता हूँ कि ये सब हनुमन्तलालके कीर्तन और

हनुमानचालीसा-पाठका ही प्रभाव है। मैंने फिर पुलिसको

इत्तला दी और क्रेनद्वारा कारको टुकके नीचेसे निकलवाया।

पुलिसवालोंके कहनेपर भी मैंने किसीके खिलाफ कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की, बल्कि मैं उन सज्जनको ढुँढ रहा था, जिन्होंने हमारी कारका दरवाजा खोला, किंतु वे कहीं दिखायी नहीं दिये। शायद वे भी हनुमान्जीकी प्रेरणासे ही आये थे।

किंतु मुझे लगता है कि जैसे अभी-अभी सब कुछ हुआ है। मैं श्रीहनुमान्जीकी कृपाका मन-ही-मन धन्यवाद करता रहता हूँ, जिससे मुझे नया जीवन मिला।—डॉ० देवदत्त लवानिया

घटना पुरानी है, एक उच्चाधिकारी महोदय तीर्थयात्राके उद्देश्यसे श्रीचित्रकूट स्टेशनपर उतरे। ताँगा या किसी सवारीके

(२)

श्रीहनुमान्जीने पुकार सुनी

अभावमें बच्चोंको दो मजदूरोंने लिया और अधिकारी महोदयकी धर्मपत्नीने एक बच्चेको स्वयं अपनी गोदमें लेकर प्रस्थान किया। वहाँसे चलकर पयस्विनीजीके तटपर पहुँचनेपर

अधिकारी महोदयने कहा कि 'पहले मैं स्नान कर लूँ, फिर

और लोगोंको स्नान करा दूँगा।' वे चले गये। श्रीमतीजीने सोचा कि 'मैं भी नहा लूँ' और छोटे बच्चेको लेकर वे भी स्नानके लिये चलीं। बच्चेको किनारेपर बैठाकर वे गंगाजीमें स्नान करने लगीं। वे स्नान करनेमें तन्मय हो गयीं। बच्चेका

ध्यान नहीं रहा। इसी समय वह किनारेपर बैठा हुआ बच्चा नदी में खिसक गया। बच्चेका ध्यान आते ही देखा तो वह जहाँ बैठा था, वहाँ नहीं दिखायी दिया। अब तो वे बड़े जोरसे रोने-चिल्लाने लगीं। मजदूर भी दौड़े, अधिकारी महोदयने सुना तो वे भी दौड़े, बच्चेको ढूँढ़ा, पर कहीं पता न लगा।

इधर माता जब बच्चेके लिये बेचैन होकर रो रही थीं, तभी उनका ध्यान श्रीभगवानुकी कृपा-सुधाकी ओर गया। उन्होंने रोते-रोते ही कहा—'भगवन्! चित्रकूट आनेपर तो दु:ख दूर होते हैं, मुझे यह महान् दु:ख क्यों मिला?' उनका विलाप बढता ही गया। वे जोरसे रोकर हाथ उठाकर कहने लगीं—'हे हनुमान्जी! तुम्हें श्रीरामजीकी दुहाई है, मेरे लड़केको

ढूँढ़कर तुरंत ला दो।' इस करुण प्रार्थनाको सुनकर एक

मोटा-ताजा बन्दर पासके वृक्षसे गंगाजीमें कूद पड़ा और

उसने कुछ ही देरमें बच्चेका हाथ पकड़कर लाकर किनारेपर बैठा दिया। उस बन्दरको केवल उन श्रीमान् अधिकारी महोदय, उनकी श्रीमतीजी तथा पासके सज्जनोंने ही देखा और उसी समय वह बन्दर अदृश्य भी हो गया। उन दोनोंके हर्षका पार न रहा। उन्होंने बच्चेके मिलनेकी प्रसन्नतामें चित्रकूटकी

अपार महिमाका वर्णन किया। बच्चों तथा बन्दरोंको मिठाई आज इस घटनाको दो वर्षसे भी अधिक हो गया है, बाँटी गयी, तत्पश्चात् वे चित्रकृटजीकी परिक्रमा करके अपने पूर्वनिश्चित स्थानपर चले गये। मैं भी उस समय गंगाजीमें स्नान कर रहा था, किंतु वहाँसे पर्याप्त दूर था। इसलिये मैं उस बन्दरको न देख पाया।-रामेश्वरप्रसादजी गुप्त

पढो, समझो और करो संख्या १२] पढ़ो, समझो और करो अस्पताल ले चलना है। एक ऑटो ले आओ', थोड़ी (१) अजनबीकी सेवाका उत्कृष्ट उदाहरण ही देरमें ऑटो आ गया। दोनों युवकोंने मुझे सहारा देकर गत ५ अप्रैल २०१५ ई० को मैं सपत्नीक ऑटोमें बिठाया और ड्राइवरसे बोले—'महाराजा यशवन्तराव हॉस्पिटल चलो। हम मोटर साइकिलसे आते हैं।' दोनों महाकालकी नगरी उज्जैनकी यात्रापर गया था। महाकालकी पूजा-अर्चना पूरी करके अगले दिन ओंकारेश्वर युवकोंने अस्पताल पहुँचकर मुझे सहारा देकर इमरजेन्सी ज्योतिर्लिंगके दर्शनहेतु हम इन्दौर गये। वहाँ बस-वार्डमें पहुँचाया तथा वहाँ उपस्थित डॉक्टरसे प्रार्थना की स्टैण्डके पास ही एक होटलमें ठहरे, अगले दिन सबेरे कि आप हमारे अंकलको देख लें, इनकी हालत बहुत ही हम ओंकारेश्वरकी यात्रापर चले, मान्धाताद्वीप पहुँच खराब है। हमने ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग एवं ममलेश्वर ज्योतिर्लिंगकी डॉक्टरने तुरन्त मेरा चेकअप करके मुझे बेडपर पूजा-अर्चना की तथा वहाँसे हम बस स्टॉपपर आ गये। लेटनेको कहा-मुझे एक इन्जेक्शन देकर उन्होंने अपने सबेरेसे कुछ खाया-पिया नहीं था तो सोचा बस स्टॉपपर असिस्टेन्टको कहा कि इन्हें तुरन्त ग्लूकोजकी बोतल खा लेंगे, परंतु ११:३० बजेवाली इन्दौर जानेवाली बस चढ़ाओ। मुझे ग्लूकोज चढ़ानेके बाद पत्नीने उन तैयार खड़ी थी। प्यास बहुत लगी थी तो स्टॉपपर ही युवकोंसे खाना खा लेनेको कहा। वे बोले, 'हम खाना एक शिकंजीवालेसे दो गिलास शिकंजी पी ली और खा लेंगे, पहले अंकलका इलाज तो आरम्भ हो जाय।' बसमें बैठ गये। करीब २ बजे हम इन्दौर पहुँच गये। ग्लूकोजकी एक बोतल चढ़ाते ही मुझे सर्दी लगने वहीं होटलके पास ही एक गुजराती रेस्टोरेन्टमें हमने लगी, मैं ठण्डसे काँपने लगा। पत्नीने वार्डमें कम्बल खाना खाया और होटलमें वापस आ गये। माँगा तो पता चला कि गर्मियोंमें कम्बल स्टोर में जमा

एक्षं पित्रपंत्रणस्थि इह्वर्धं अवारकार भारतः //dsaggalahaस्माहनीय MASE भ्राप्तिस्ति प्रमुक्ति असंगर्शकार

अभी एक घण्टा बीता होगा, अचानक मेरे पेटमें दर्द-सा हुआ और मुझे उल्टी हो गयी, फिर दस्त हुआ। कुछ देर बाद तो फिर वही क्रम आरम्भ हो गया, मुझे हैजा (डायरिया) हो गया और इस तरह लगातार उल्टी-दस्तोंसे मेरा शरीर निर्जीव-सा हो गया। बुढापेके शरीरमें सहनशक्ति समाप्त होने लगी। पत्नी पासके मेडिकल स्टोरसे हाल बताकर दवा लायी, उससे भी

आराम नहीं मिला और पानी भी पिया तो वह भी नहीं

पचा, अब मेरी बिगड़ती स्थिति देख पत्नीने होटलमें काम करनेवाले युवकसे किसी डॉक्टरको बुला लानेको

कहा—वह युवक थोड़ी देर बाद लौटा, बोला—

ऑन्टीजी! ९ बजे हैं, इस समय डॉक्टरोंकी दुकानें बन्द

हो गयी हैं। कोई डॉक्टर उपलब्ध नहीं है। पत्नीने फिर

कहा कि कोई अस्पताल निकटमें हो तो वहीं ले चलो।

इसपर वह युवक बोला, 'मैं अभी आता हूँ।' वह अपने

हो गये हैं। कम्बल बाहर उपलब्ध नहीं हो सका। दोनों युवक वहींपर थे, वे बोले, 'हम होटल जाकर वहाँसे कम्बल ले आते हैं।' होटल वहाँसे ४-५ किलोमीटर दूर था। थोड़ी देर बाद ही वे कम्बल ले आये, मुझे चैन मिला। दोनों युवक रात्रिके ४ बजेतक वहीं मेरी देखभालमें लगे रहे। तीन-चार बोतल ग्लूकोज चढ़ा तो मुझे नींद आ गयी। थोड़ी देर बाद डॉक्टरने मेरा चेकअप करके कहा—'अब इनकी हालत ठीक है, आप चाहें तो इन्हें ले जा सकते हैं।' अस्पतालके वातावरणसे मुझे वैसे ही घबराहट हो रही थी, मैंने चलनेके लिये कहा। थोड़ी देरमें हम होटल आ गये। होटल आनेपर मुझे गहरी नींद लगी और मैं सबेरे ९ बजे उठा तो वे दोनों युवक मेरा हाल जाननेके लिये पुन: आये। मैंने उन्हें हृदयसे धन्यवाद दिया कि

आपने जो उत्कृष्ट सेवाका परिचय दिया, वह अत्यन्त

भाग ९० ***************** मैंने पत्नीसे उन्हें १००-१०० रुपये देनेका कहा तो दोनों उसका साथ देते। वह सैकडों गायें और बैल अपने हाथ जोडने लगे, आप हमारे दादाके समान हो, आप सामने ही तस्करोंद्वारा सीमापार निकलवा देता और मोटी रकम आपसमें बाँट लेता, जिसमें गुप्तचरोंका भी हिस्सा कुछ मत दीजिये। मैंने कहा यदि तुम मुझे दादा समझ रहे तो दादाका कहा भी तो मानो, मेरी छोटी-सी भेंट रख देता। स्वीकार नहीं करोगे तो मुझे दु:ख होगा। वे मान गये वह डण्डा मारकर खुद पशुओंको दौड़ाता और और उन्होंने मेरे पैर छूकर कहा हमें आशीर्वाद दीजिये, गुस्सेमें सींग तोड़ डालता, पूँछ काट देता या गुप्तांगोंपर मैंने उन्हें हृदयसे आशीर्वाद दिया। एसिड/पेट्रोल डाल देता, ताकि पशु बहुत तेजीसे अस्पताल जानेसे पहले मैं लेटा-लेटा 'हरे राम हरे सीमापार भाग जाय। मैंने उससे बहुत कहा कि यह अनुचित और पाप है, पर रुपयेके लालचमें वह नहीं राम राम राम हरे हरे' का जप कर रहा था और अवश्य ही मेरे प्रभु रामने मेरी पुकार सुनकर अपने देवदूतोंके माना। मुझसे यह अत्याचार देखा न गया, पर कर भी रूपमें उन युवकोंको मेरे पास भेज दिया, एक अजनबीकी कुछ नहीं सकता था। अन्तमें ऊपर बताकर मैंने सेवाका ऐसा उत्कृष्ट उदाहरण मैंने पहले नहीं देखा था। मुख्यालयमें बदली करवा ली। साथमें कई जवानोंने भी सचमुच, मेरे रामद्वारा भेजे गये वे दोनों देवदूतोंसे कम बदली करवा ली। अब तो उसका एकच्छत्र राज्य हो नहीं थे। मैं आज भी उनका हृदयसे आभार मानकर उन्हें गया। तस्करोंसे मिलकर खूब मांस और शराबका सेवन कोटि-कोटि आशीर्वाद देता हूँ, वे जहाँ भी रहें सुख से होता और मोटी रकम हर महीने घर भेजी जाती। नयी रहें, तरक्की करते रहें। - आनन्द प्रकाश गौतम बछिया-बछड़ोंका रस्सीसे मुँह बाँधकर रेड़ीपर लादकर ऊपरसे तिरपाल बाँधकर कई-कई रेडियाँ भिजवा देता। (२) सरिया गर्म करके गाय-भैंसपर निशान कर देता। हिंसा करनीका फल ही हिंसा! अन्दरका मानव मर गया था। रिपोर्ट करो, घटना लगभग दस साल पुरानी है, जो मेरी आँखोंके सामने घटी थी। उसे याद करके आज भी मेरा कोई नहीं सुनता। प्रूफ दो-सबूत दो-यही कह देते। सिर गोमाताके चरणोंमें झुक जाता है। वर्षाका मौसम था और उस समय सीमान्त इलाकेमें वार्षिक फायरिंग हर जवानको करनी पड़ती है। पशुओंकी तस्करी बडे जोरोंसे चल रही थी। तस्करोंका ताकि प्रशिक्षण भूल न जाय। लम्बी दूरीतक गोले जाल-सा बिछा था। वे ड्यूटीपर रहनेवाले जवानोंकी गिरानेकी क्षमतावाले हथियार इस्तेमाल होते हैं। फायरके कमजोरी ढूँढ़ते हैं। फोर्समें भी सब प्रकारके इंसान पाये दौरान जो गोला मिस हो जाय। उसे इकट्ठा करके गड्टेमें रखकर अतिरिक्त बारूदसे बर्बाद किया जाता है, ताकि जाते हैं। सभीको बार-बार यही समझाया जाता है कि किसी प्रकारकी तस्करी नहीं करनी है, दोषी लोगोंको कोई दुर्घटना न हो। सख्त दण्ड मिलेगा। पशुओंपर हो रहे घोर अत्याचारोंकी मुख्यालयमें बदली करवानेके एक साल बादकी बात है, तारीख मुझे याद नहीं। फायरिंगमें कोई २० बम (गोले) सी०डी० और छायाचित्र दिखाये जाते, परंतु इतना करनेपर भी कुछ लोग लालचमें आ ही जाते। मिस हो गये थे। उन्हें नष्ट करनेके लिये सक्षम अधिकारीके हमारे बीचमें साँपला गाँव जिला रोहतक साथ उसी कमाण्डरको जाना पड़ा। ३ मिनटमें मिस बमोंको (हरियाणा)-का एक कमाण्डर ड्यूटीपर था। उसपर अतिरिक्त बारूद बर्बाद कर देती है, आज किंतु पता नहीं पैसा कमानेका जुनून सवार रहता। तस्करोंसे उसकी क्यों, ३५ मिनटतक कोई हलचल नहीं हुई। सक्षम अधिकारीके अच्छी दोस्ती थी। उसके कार्यसे काफी जवान परेशान साथ वह कमाण्डर पुन: उस जगह गया। हम सभी दूर लेट गये। ५० मीटर दुरी रह गयी। कमाण्डरने अधिकारीको थे कि पश्-हत्याका पैसा खाता है। कुछ कार्मिक भी

पढो, समझो और करो संख्या १२] वापस भेजा और स्वयं आगे बढ़ा, ज्यों ही वह कमाण्डर था। कुछ माह बाद प्रतिबन्ध समाप्त हुआ और आयोगने गड्ढेके पास पहुँचा, जबरदस्त दो धमाके हुए, जैसे उसे उस विद्यालयमें नियुक्तिहेतु भेज दिया। उस बीच आसमान हिल गया। धरती काँप गयी। एक ही साथ २० उस विद्यालयकी प्रबन्ध-समिति बदल चुकी थी और बम फट गये—बर्बाद हो गये, उसीमें उस कमाण्डरका प्रबन्धक उन्हें लेनेके लिये तैयार नहीं थे। मेरे मित्र तथा नामोनिशान मिट गया। बहुत खोजबीनकर २०० ग्राम उनका पुत्र बहुत परेशान था। चिथड़े लेकर पुलिसमैन आया। सूचना ऊपर गयी। सब एक दिन उनके पुत्रको ज्ञात हुआ कि प्रबन्ध-कह रहे थे-गोमाताके हत्यारेका परिणाम देखा! जैसी समितिकी बैठक शीघ्र ही होनेवाली है। यद्यपि उस करनी वैसा फल। घटना देख/सुनकर कुछ जवान कहने प्रबन्ध-समितिमें उसका कोई परिचय नहीं था, फिर भी लगे-पाप! वह भी घोर पाप-हजारों गायोंकी हत्याका ईश्वरकी प्रेरणासे वह वहाँ गया और बरामदेमें टहलने पाप फल देकर ही गया। लिखते समय पूरी घटना मेरे लगा। बैठकमें एक महिला सदस्य भी थीं। उन्होंने देखा दिमागमें घूम गयी। कोई लडका बाहर टहल रहा है। उन्होंने उसे गौरसे देखा और अन्दर बुलाया तथा पूछा कि तुमने कभी —राजबहादुर शर्मा किसीको ब्लड (रक्त) दिया है? उसने कहा-नहीं। (3) निष्काम सेवाका सुपरिणाम वह फिर बोली, 'आजसे ८-९ वर्ष पूर्व, जरा याद यह घटना लगभग १०-१२ वर्ष पुरानी है। मेरे करो।' उसे याद आया और कहा 'हाँ, मेरे एक मित्रने एक मित्र हैं श्रीतोमरजी। उनका निवास मेरे मुहल्लेके कहा था, तो दे दिया था।' महिलाने पूछा—यहाँ क्यों समीप ही है। एक दिन वे और उनका छोटा पुत्र मेरे आये हो ? उसने संक्षेपमें कारण बतलाया। महिलाने एक कागजपर अपना नाम और पता लिख दिया और कहा पास आये। तोमरजीने बतलाया कि मेरी पुत्रवधूका चयन माध्यमिक विद्यालयहेतु आयोगसे हो गया है और कि शामको घरपर आना। अलीगढ़ जिला दिया गया है। आयोगमें यह नियम है शामको लडका घर पहँचा, तब महिलाने बतलाया कि तुमने जिसको खून दिया था, वे मेरे पति हैं। कि यदि किसी अन्य जिलेमें स्थानान्तरण करवाना हो विद्यालयके मैनेजर उनके जेठ थे। महिलाने प्रबन्धकको तो उस विद्यालयसे एक प्रस्ताव पास कराकर जिला विद्यालय निरीक्षकके माध्यमसे आयोग सचिवको भेज फोन किया और कहा 'भाई साहब, आयोगसे जिस दिया जाय। पुत्रवधूका विषय गणित और साइंस था। महिलाका चयन होकर आया है, उसके पतिने ही मुझे स्मरण आया कि एक प्रधानाचार्यजीने मुझसे आपके भाईकी जान ८-१० वर्ष पूर्व बचायी थी। उसने साइंस-गणितके लिये शिक्षक देनेको कहा था। मैंने ही खून दिया था। अतः कृपया उसका कार्य कर दें तथा उसकी पत्नीको ज्वाइन करवा लें। वह तो भूल गया था, उनको फोन किया तो उन्होंने बतलाया कि अभी जगह खाली है। उन्होंने प्रस्ताव बनवाकर प्रबन्ध-समितिसे मुझे ही उसका चेहरा याद आया।' मैनेजर साहबने दूसरे ही दिन उसकी पत्नीको ज्वाइन करवा दिया। पास कराकर जिला विद्यालय निरीक्षकके पास भिजवा यह घटना निष्काम कर्मयोगका फल बतलाती है। दिया। वहाँपर ऑफिसवालोंने बतलाया कि वह पद आरक्षित है। उसपर नियुक्ति नहीं हो सकती है। उन्होंने उस निष्काम कर्मयोगका फल पता नहीं क्या और कब एक विद्यालयका नाम बतलाया, जहाँ पद रिक्त है और मिले, पर मिलेगा जरूर। मैं उस घटनासे अधिक आरक्षित नहीं है। वहाँसे प्रस्ताव पास कराकर आयोगको प्रभावित हुआ तथा अन्य लोगोंको भी निष्काम कर्म भेज दिया गया। उस बीच आयोगके चयनपर प्रतिबन्ध करनेहेत् प्रेरित करता रहता हूँ।-रमाकान्त शुक्ल

मनन करने योग्य चाटुकारिता अनर्थकारिणी है

बड़ी मीठी लगती है चाटुकारिता और एक बार जब चाटुकारोंकी मिथ्या प्रशंसा सुननेका अभ्यास हो जाता

है, तब उनके जालसे निकलना कठिन होता है। चाटुकार

लोग अपने स्वार्थकी सिद्धिके लिये बड़े-बड़ोंको मूर्ख

बनाते रहते हैं और आश्चर्य यही है कि अच्छे लोग भी उनकी झूठी प्रशंसाको सत्य मानते रहते हैं! चरणाद्रि (चुनार) उन दिनों करूषदेशके नामसे विख्यात था। वहाँका राजा था पौण्ड्रक। उसको चाटुकार सभासद् कहते थे—'आप तो अवतार हैं। आप ही वासुदेव

हैं। भूभार दूर करनेके लिये आप साक्षात् नारायणने अवतार धारण किया है। आपकी सेवा करके हम धन्य हो गये। जो आपका दर्शन कर पाते हैं, वे भी धन्य हैं।'

कि उसने अपनेको वासुदेव कहना प्रारम्भ किया। वह दो कृत्रिम हाथ लगाकर चतुर्भुज बना रहने लगा और शंख, चक्र, गदा तथा कमल उन हाथोंमें लिये ही रहनेका उसने अभ्यास कर लिया। अपने रथकी पताकापर उसने गरुडका

पौण्डुक इन चाटुकारोंकी मिथ्या प्रशंसामें ऐसा भूला

चिह्न बनवाया। बात यहींतक रहती, तब भी कोई हानि नहीं थी; किंतु उसने तो गर्वमें आकर दूत भेजा द्वारका।

श्रीकृष्णचन्द्रके पास यह सन्देश भेजा उसने—'कृष्ण! मैं

ही वासुदेव हूँ। भूभार दूर करनेके लिये मैंने ही अवतार धारण किया है। यह बहुत अनुचित बात है कि तुम भी

अपनेको वासुदेव कहते हो और मेरे चिह्न धारण करते हो। तुम्हारी यह धृष्टता सहन करने योग्य नहीं है। तुम वासुदेव

कहलाना बन्द करो और मेरे चिह्न छोडकर मेरी शरण आ

जाओ। यदि तुम्हें यह स्वीकार न हो तो मुझसे युद्ध करो।'

द्वारकाकी राजसभामें दूतने यह सन्देश सुनाया तो

यादवगण देरतक हँसते रहे पौण्ड्रककी मूर्खतापर। श्रीकृष्णचन्द्रने दूतसे कहा—'जाकर कह दो पौण्डुकसे

कि युद्ध-भूमिमें मैं उसपर अपने चिह्न छोड़ँगा।'

पौण्डुकको गर्व था अपनी एक अक्षौहिणी सेनाका। अकेले श्रीकृष्णचन्द्र रथमें बैठकर करूष पहुँचे तो वह

पूरी सेना लेकर उनसे युद्ध करने आया। उसके साथ उसके मित्र काशीनरेश भी अपनी एक अक्षौहिणी सेनाके

साथ आये थे। पौण्डुकने दो कृत्रिम भुजाएँ तो बना ही

भी धारण किया था उसने। नटके समान बनाया उसका कृत्रिम वेश देखकर श्रीकृष्णचन्द्र हँस पडे। पौण्डुक और काशिराजकी दो अक्षौहिणी सेना तो

रखी थीं, शंख-चक्र-गदा-पद्मके साथ नकली कौस्तुभ

शार्ङ्गसे छूटे बाणों, सुदर्शन चक्रकी ज्वाला और कौमोदकी गदाके प्रहारमें दो घण्टे भी दिखायी नहीं पडी। वह जब

समाप्त हो गयी, तब द्वारकाधीशने पौण्डुकसे कहा—

'तुमने जिन अस्त्रोंके त्यागनेकी बात दूतसे कहलायी थी,

उन्हें छोड़ रहा हूँ। अब सम्हलो!'

गदाके एक ही प्रहारने पौण्डुकके रथको चकनाचूर कर दिया। वह रथसे कूदकर पृथ्वीपर खड़ा हुआ ही

था कि चक्रने उसका मस्तक उड़ा दिया। उस चाटुकारिताप्रिय मूर्ख एवं पाखण्डीका साथ देनेके कारण काशिराज भी युद्धमें मारे गये।[श्रीमद्भागवत-महापुराण] ॥ श्रीहरि:॥

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

'कल्याण'

-के ९०वें वर्ष (वि०सं० २०७२-७३, सन् २०१६ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

निबन्ध-सूची

विषय

(विशेषाङ्कको विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।) पृष्ठ-संख्या विषय १- अकिंचन कौन? (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') सं०४-पृ०२२ २- अणुयुद्ध हुआ तो गायके गोबरसे लिपा घर ही बचेगा (श्रीरजतकुमारजी)..... सं०७-पृ०३९ ३- अतिथिदेवो भव (डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा) ... सं०१०-पृ०२० ४- अपनी निर्बलता और भगवानुकी कृपा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०७-पृ०१२ ५- अमूल्य शिक्षा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०९-पृ०७ ६ - अमृत-कण सं०३ - पृ०१६ ७- अवन्तिका-माहात्म्य..... सं०७-पु०४४ ८- आगमोंका स्वरूप और वैखानस-आगम (डॉ० श्रीबसन्तबल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०) .. सं०८-पृ०३२ ९- आजके सत्संग (श्रीसुदर्शनसिंह 'चक्र'जी) [प्रेषक—श्रीजनार्दनजी पाण्डेय] सं०२-पृ०२८ १०- आज भी खरे हैं तालाब [पर्यावरण-चिन्तन] (श्रीअनुपमजी मिश्र) सं०८-पृ०२३ ११- आदर्श कर्मठता [प्रेरक-प्रसंग]..... सं०१२-पृ०१९ १२- आदर्श बी०ए० बहू [प्रेरक कथा] (पं० श्रीरामनरेशजी त्रिपाठी)..... सं०१०-पृ०३१ १३- आध्यात्मिकताकी अपेक्षा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) .. सं०३-पृ०१२ १४- आध्यात्मिक लीलाका रहस्य (ब्रह्मलीन वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज) [प्रेषक—स्वामी श्रीआनन्दस्वरूपजी] सं०३-पृ०१५ १५- आनन्दरामायण-एक संक्षिप्त परिचय (डॉ० श्रीबसन्तवल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०)...... सं०४-पृ०३२ १६- 'ईस्वर अंस जीव अबिनासी' (श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्रीवेदान्तीजी महाराज) [प्रेषक-श्रीमोहनकुमारजी शर्मा]...... सं०७-पृ०१४ १७- उत्तरदायी कौन? (श्रीरामदेवसिंहजी शर्मा) सं०६-पृ०३१ १८- उतार-चढाव [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०२-पृ०३० १९- उदार व्यवहार हर स्थितिमें प्रसन्नतादायक सं०११-पृ०३२ २०- उद्धार और अधोगति (श्रीबरजोरसिंहजी) सं०१२-पृ०२० २१- कर्तव्यपालन भी आवश्यक (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०५-पृ०९ २२- कलियुगका परम साधन (श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज) सं०११-पृ०१२

२३- कल्याण— ... सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पृ०५,

विशेषाङ्क 'श्रीशिवमहापुराणाङ्क'..... सं०७-पृ०४९ २५- कविताओंमें गंगा : एक चयनिका

पुष्ठ-संख्या

(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव) सं०६-पृ०२५ २६ - कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ (पं० श्रीजानकीनाथजी कौल

'कमल', एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर) सं०१२-पृ०२७

२७- कहानीका असर [कहानी] (मास्टर श्रीपारसचन्दजी) सं०११-पृ०२७ २८- काशीमें देवियोंके मन्दिर और उनकी यात्रा

(पं० श्रीशालिग्रामजी शर्मा) सं०१०-पृ०२० २९- कृत्तिवास रामायणमें गंगावर्णन [अनु०—श्रीमथुराप्रसादजी] [प्रेषक—श्रीअवधिबहारीजी शुक्त] सं०६-पृ०२४

३०- कृपानुभृति सं०२-पृ०४६, सं०३-पृ०४५, सं०४-पृ०४६, सं०५-पु०४६, सं०६-पु०४६, सं०७-पु०४३, सं०८-पु०४६, सं०९-

पु०४५, सं०१०-पु०४५, सं०११-पु०४६, सं०१२-पु०४२

३१- कैसे बनें भगवान्के प्रेमी भक्त? (डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापित)..... सं०१२-पृ०२९

३२- कौरव-सभामें श्रीकृष्णका विराट्-रूप [आवरणचित्र-परिचय] सं०७-पृ०६

३३- खतरनाक चोर (गोलोकवासी महात्मा श्रीरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज) सं०५-पृ०२५

३४- खेलत स्यामा-स्याम ललित ब्रजमें रस-होरी (श्रीअर्जुनलालजी बंसल) सं०३-पृ०१९

३५- गंगा, कर्णवास तथा काका हाथरसी

(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव) सं०३-पृ०२४ ३६- गंगा-गौरव..... सं०२-पृ०७

३७- गंगाधर भगवान् शंकर [आवरणचित्र-परिचय]..... सं०२-पृ०६ ३८- गंगावतरण (डॉ० श्रीकमलाकान्तजी शर्मा 'कमल',

एम०ए०, पी-एच० डी०) सं०२-पृ०३२ ३९- गाण्डीव धनुषका इतिहास

(पण्डित श्रीजानकीनाथजी शर्मा) सं०६-पृ०३३ ४०- 'गावो विश्वस्य मातरः' (अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर

एवं श्रीद्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य

स्वामी श्रीस्वरूपानन्दसरस्वतीजी महाराज) सं०५-पृ०१६ ४१- गोपालन और गोचर भूमि (प्रो॰ डॉ॰ श्रीबाबूलालजी, डी॰ लिट॰)...... सं०९-पृ०४१

४२- गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) .. सं०२-पृ०४२

(गोलोकवासी पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र) सं०४-प०३८ सं०६- पु०५, सं०७-पु०५, सं०८-पु०५, सं०९-पु०५, सं०१०-पु०५,

४३- गोमाताकी आधिदैविक शक्ति

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma गोम्यूसी किये ही ग्राम्म LOVE BY Avinash/Sha

^ய] [[ያዩ]

विषय

८४- परोपकार

८२- परमात्माके आनन्दमय स्वरूपका ध्यान

८३- परमार्थत: अजर-अमरके लिये रोना व्यर्थ

पृष्ठ-संख्या

सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४७, सं०६-पृ०४७, सं०७-पृ०४५, सं०८-

पु०४७, सं०९-पु०४७, सं०१०-पु०४६, सं०११-पु०४७, सं०१२-पु०४२

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ... सं०६-पृ०७

(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) .. सं०११-पृ०९

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ... सं०८-पृ०७

८५- पवित्र जीवनका साधन (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट).. सं०८-पृ०१४

८६ - पाकिस्तानके पाँच पवित्र मन्दिर (श्रीशैलेन्द्रसिंहजी) सं०९-पृ०२७

८७- पापका फल (पं० श्रीआनन्दस्वरूपजी पाण्डेय) ... सं०११-पृ०३५

पृष्ठ-संख्या

विषय

५१- चित्त-शुद्धि

४५- गोमूत्रमें मिला सोना सं०१०-पृ०८

४६- गोमूत्रसे कैंसरका उपचार सं०६-पृ०४१

४७- गोरक्षाका प्रश्न [राधेश्याम खेमका]...... सं०१०-पृ०५०

४८- गोवंशकी रक्षा कैसे हो? (डॉ० श्रीब्रह्मानन्दजी) ... सं०२-पृ०४०

५०- गोहत्यामें निमित्त बननेका परिणाम सं०८-पृ०४१

५२- चूड़ामणि (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०३-पृ०२८

५३- चोरीसे नहीं जाऊँगी [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]

(श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी) सं०२-पृ०२१

(तत्त्वदर्शी महात्मा श्रीतैलंग स्वामीजी महाराज)... सं०११-पृ०२४

४९- गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीकी गंगा-स्तुति

(आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०२-पृ०३८	८८- पावन गंगा (श्रीएरिक न्यूबीजी) [ॲंगरेजी अनु०—श्रीअनिकेन्द्रनाथ]
५४- चौधरीजीका मायरा [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)	[हिन्दी अनु०—डॉ० श्रीभानुशंकरजी मेहता] सं०४-पृ०१७
[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०५-पृ०२६	८९- पुण्यप्रदर्शनका फल : बालि-प्रसंग (पं॰ श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय)
५५- जगत्स्वप्न (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) सं०६-पृ०१७	[प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता] सं०११-पृ०२२
५६- जगद्गुरु [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]	९०- पुष्पकारूढ़ श्रीराम [आवरणचित्र-परिचय] सं०१०-पृ०६
(आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०६-पृ०२९	९१– प्रतिकूलताका नाश
५७– जन्मान्तरीय पुण्यकर्मोंसे सत्संगकी प्राप्ति सं०२–पृ०२९	(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) . सं०१०-पृ०७
५८- जिस देशमें गंगा-जमुना बहती हैं [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)	९२- प्रभो! आपको कैसे प्रसन्न करें? [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]
[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०३-पृ०३६	(आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०१२-पृ०३३
५९- जीवनका सच्चा लाभ (श्रीबरजोरसिंहजी) सं०५-पृ०२४	९३- प्रेमका पन्थ निराला है! (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) सं०११-पृ०१८
६०- जीवनकी सार्थकता और आधुनिक मूल्य [चिन्तन]	९४- प्रेमी भक्त और भगवान्
(आचार्य श्रीतुलसीजी) सं०४-पृ०१६	(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) सं०३-पृ०३९
६१- जीवोंकी स्वतन्त्रता	९५– बन्धनोंसे छूटनेका नाम मुक्ति
(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०१०-पृ०९	(ब्रह्मलीन वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज)
६२- ज्ञानकी दुर्लभता और उसकी प्राप्तिका उपाय	[प्रेषक—श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग]सं०६-पृ०११
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०२-पृ०९	९६- बलात्कारके समय क्या करें? (महात्मा गांधी) सं०८-पृ०३७
६३- डेंगू बुखारका आसान आयुर्वेदिक उपचार	९७- बलिदानको परम्परा [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)
(डॉ० श्रीदिलीपकुमारजी) सं०१२-पृ०३४	[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०९-पृ०३३
६४- '…ताहि बोउ तू फूल!' (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) सं०१२-पृ०१४	९८- भक्तका किसीसे राग-द्वेष नहीं होता
६५– दयाका पुरस्कार सं०११–पृ०३९	(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) सं०४-पृ०३७
६६- दानके दृष्टान्त [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टॉॅंटिया)	९९- भक्तकी बात (स्वामी श्रीभोलेबाबाजी) सं०१२-पृ०९
[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टॉॅंटिया] सं०११-पृ०३३	१००- भक्तगाथा (संत श्रीखुशालबाबा)
६७- दारुब्रह्म श्रीजगन्नाथ और पूर्णब्रह्म श्रीरामभद्र	(श्रीपांडुरंग सदाशिवजी ब्रह्मणपुरे 'कोविद') सं०६-पृ०३५
(श्रीनिमाइचरणजी मिश्र) सं०७-पृ०२४	१०१- भक्त रामप्रसाद [भक्त-चरित]
६८- दुःखमें सुख [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)	(संत श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी) सं०९-पृ०३५
[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०७-पृ०३६	१०२-भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र [संत-चरित]
६९- दुर्गासप्तशती : मोक्षदायिनी कथा	(पं० श्रीदामोदर प्रह्लादजी पाठक, शास्त्री) सं०१०-पृ०२८
(प्रो॰ श्रीयमुनाप्रसादजी)सं॰६-पृ०२२	१०३- भगवती गंगा मंगलका विस्तार करें सं०२-पृ०१४
७०- दुर्व्यसनोंसे मुक्ति [प्रेरक-कथा]	१०४- भगवती गायत्री [आवरणचित्र-परिचय] सं०६-पृ०६
(भक्त श्रीरामशरणदासजी) सं०४-पृ०१३	१०५ - भगवदर्थ कर्म और भगवान्की दयाका रहस्य
७१- दृढ़िनश्चय [प्रेरक-प्रसंग] सं०७-पृ०३७	(ब्रह्मलीन परम् श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०७-पृ०७
७२- दृढ़ निश्चयकी शक्ति (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी) सं०६-पृ०१०	१०६ - भगवद्गीता-विज्ञान
७३- देवर्षि नारद [आवरणचित्र-परिचय] सं०५-पृ०६	(श्रीसुमितचन्द्र्जी श्रीवास्तव, एम० एस-सी०) सं०१०-पृ०२५
७४- द्वार् खोलो! [कहानी] (श्री 'चक्र') सं०५-पृ०३२	१०७- भगवन्नाम-महिमा
७५- धर्मका स्वरूप (श्रीअमृतलालजी गुप्ता) सं०५-पृ०३७	(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०५-पृ०७
७६- नटराज-उपाधिके रहस्य (श्री 'प्रसन्न') सं०७-पृ०११	१०८- भगवान् कपिलका प्रादुर्भाव
७७- नम्रताके व्यवहारसे पराभव नहीं होता [नीतिकथा] सं०५-पृ०१५	(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०२-पृ०११
७८- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक	१०९- भगवान्का परम भक्त कौन? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी
विषय-सूची सं०१२-पृ०४७	श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०१०-पृ०११
७९- नियमोंके पालनसे कल्याण	११० – भगवान्के बनो (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०३-पृ०८	श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०९-पृ०१०
८०- निश्चिन्त हो रहो (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) सं०२-पृ०१५	१११- भगवान्के लिये काम कैसे किया जाय?
८१- पढ़ो, समझो और करोसं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४७,	(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) . सं०११-पृ०७

विषय

११४- भगवान् वराहका दिव्य स्वरूप [आवरणिचत्र-परिचय] सं०९-पृ०६ ११५- भगवान् विष्णु किससे प्रसन्न रहते हैं सं०८-पृ०२१ ११६ - भगवान् सगुण हैं या निर्गुण ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०६-पृ०१३ ११७- भगवान्से अन्तरंगता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०८-पृ०१२ ११८-भगवान् शिवका वर-वेष [आवरणचित्र-परिचय] .. सं०३-पृ०६ ११९- भजनकी आवश्यकता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)......सं०१२-पृ०११ १२०- भजन कैसे करें ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०४-पृ०११ १२१ - भजन कैसे करें ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०५-पृ०१२ १२२- भावकी शुद्धिसे कर्मकी शुद्धि (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) सं०७-पृ०३५ १२३- मकर-संक्रान्तिपर्वपर गंगासागरयात्रा (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी त्रिपाठी)...... सं०२-पृ०१६ १२४- मधुराद्वैताचार्य संत श्रीगुलाबरावजी महाराज (डॉ० श्रीअरविन्द स० जोशी मेहेकर)..... सं०७-पृ०३१ १२५- मनन करने योग्य... सं०२-पृ०५०, सं०३-पृ०५०, सं०४-पृ०५०, सं०५-पु०५०, सं०६-पु०५०, सं०७-पु०४८, सं०८-पु०५०, सं०९-पृ०५०, सं०१०-पृ०४९, सं०११-पृ०५०, सं०१२-पृ०४६ १२६- मन्त्र-चैतन्य (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) सं०९-पृ०१३ १२७- मन्त्र-सिद्धि [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') सं०७-पृ०२७ १२८- महारसायन (श्रीसीतारामदासजी ओंकारनाथ)..... सं०१०-पृ०२२ १२९ - माता जानकीसे गोस्वामीजीकी प्रार्थना [आवरणचित्र-परिचय] सं०८-पृ०६ १३० - मानव जीवनकी धन्यता (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) सं०१२-पृ०१० १३१ - मानव जीवनमें गुण-दोष (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) .. सं०१०-पृ०३६ १३२- मानवताकी सफल योजना (स्वामी श्रीनारदानन्दजी सरस्वती)..... सं०५-पृ०२१ १३३- मानसिक तनावके शमनमें मानसिक भावनाओंका महत्त्व (डॉ० श्री ओ० पी० द्विवेदी एवं डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)...... सं०९-पृ०३० १३४- माँ गंगाके जलप्रवाहमें प्रभुका प्रेमप्रवाह बहता है (श्रीबालकृष्णजी मेहता) सं०२-पृ०२४ १३५ - मेरा नहीं है, प्रभुका है, मेरे लिये नहीं है, प्रभुके लिये है (श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति) सं०५-पृ०२८ १३६ - मेरी माँकी रक्षा करना [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०९-पृ०४० १३७- मेरे वैरि-भावकी रक्षा करना [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०११-पृ०३७

१३८- मॉॅंकी कृपा (महात्मा श्रीश्रीसीतारामदास

१३९- मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है?

ॐकारनाथजी महाराज)..... सं०१२-पृ०२२

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) . सं०१२-पृ०७

भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०३-पृ०१३

१४०-'मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत' (नित्यलीलालीन श्रद्धेय

११३- भगवान्में मन कैसे लगे? (श्रीभँवरलालजी परिहार) .. सं०९-पृ०१७

विषय

११२- भगवान् दक्षिणामूर्तिको भद्रा मुद्रा

१४७- रामदास काठियाबाबा [संत-चरित] (श्रीरामलालजी).. सं०१२-पृ०३५ १४८- राम-नामका अखूट खजाना (महात्मा गाँधीजी) ... सं०७-पृ०३८ १४९- राम-नाम क्या है ? (श्रीयोगेश्वरजी त्रिपाठी 'योगी') ... सं०६-पृ०३२ १५०- रामराज्यमें पर्यावरण-नीति [पर्यावरण-चिन्तन] (श्रीबालकृष्णजी कुमावत)...... सं०९-पृ०२३ १५१ - रूप-स्मरणका प्रभाव [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०७-पृ०३४ १५२- लक्ष्मी गुणवान्के पास जाती हैं सं०२-पृ०३१ १५३-विएतनाममें शिवाजी महाराजकी प्रेरणा (श्रीकैलाशजी बंसल) [प्रेषक—श्रीसुरेन्द्रकुमारजी गोयल] सं०३-प०२१ १५४- विदेशोंके कुछ शिवलिंग तथा देवमूर्तियाँ सं०९-पृ०२९ १५५- विश्वका कल्याण हो...... सं०११-पृ०२९ १५६ - वीर अभिमन्यु [शौर्यकथा] (डॉ० श्रीश्यामसुन्दरजी निगम) सं०९-पृ०२० १५७- वेदोंके अनुसार ब्रह्माण्डका दिव्य अप्-गंगा (श्रीरामजी शास्त्री)..... सं०३-पृ०२२ १५८- व्रतोत्सव-पर्व .. [चैत्रमासके व्रतपर्व]-सं०२-पृ०४५, [वैशाखमासके व्रतपर्व]-सं०३-पृ०४४, [ज्येष्ठमासके व्रत-पर्व]-सं०४-पृ०४५, [आषाढ़-मासके व्रत-पर्व]-सं०५-पृ०४५, [श्रावणमासके व्रतपर्व]-सं०६-पृ०४३, [भाद्रपदमासके व्रतपर्व]-सं०८-पृ०४३, [आश्विनमासके व्रतपर्व]-सं०९-पृ०४४, [कार्तिकमासके व्रतपर्व]-सं०१०-पृ०३९, [मार्गशीर्षमासके व्रत-पर्व]-सं०११-पृ०४४, [पौषमासके व्रतपर्व]-सं०११-पृ०४५, [माघमास-के व्रतपर्व]-सं०१२-पृ०४०, [फाल्गुनमासके व्रतपर्व]-सं०१२-पृ०४१ १५९- शक्तिका संचय कीजिये (श्रीअखिल विनयजी) सं०६-पृ०४० १६०- शरणागतवत्सल [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)..... सं०८-पृ०२८ १६१ - शिवपुराण-श्रवणको महिमा सं०७ - पृ०५० १६२- श्रावणमास और उसके व्रत-पर्वोत्सव सं०७-पृ०२० १६३- श्रीकृष्णद्वारा अर्जुनको उपदिष्ट गीताका सार [आवरणचित्र-परिचय] सं०१२-पृ०६ १६४- श्रीगंगाजीका तीर्थत्व एवं माहात्म्य (मलूकपीठाधीश्वर संत श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज) सं०२-पृ०२० १६५- श्रीगंगाजीकी रथयात्राका विधान (डॉ० श्रीश्याम गंगाधरजी बापट)...... सं०२-पृ०३९ १६६ - श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना...... सं०१०-पृ०४० १६७- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना सं०१०-पृ०४३ १६८- श्रीभ्रामरी देवीकी कथा [आवरणचित्र-परिचय] सं०४-पृ०६ १६९- श्रीराधाजन्म-लीलाप्रसंग (श्रीसुरेन्द्रजी त्रिपाठी 'ब्रजरजआश्रित') सं०९-पृ०३९

(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०४-पृ०९

(ह० भ० प० श्रीलक्ष्मण रामचन्द्रजी पांगारकर) सं०११-पृ०३०

१७१ - श्रीराम-मन्त्रका मूल (पूज्य स्वामी श्रीशिवानन्दजी) सं०४-पृ०३५

१७० - श्रीरामनवमी

१७२- श्रीसिद्धारूढ स्वामी [संत-चरित]

[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०४-पृ०२३

पी-एच०डी० (आयुर्वेद), डिप्लोमा इन योग)..... सं०३-पृ०३२

(श्रीजयदीपसिंहजी, एम०ए० (हिन्दी))..... सं०३-पृ०४०

१४५ - राजाको सीख..... सं०११ - पृ०१४

१४६ - राधा बिना कृष्ण आधा (श्रीफतेहचन्दजी अग्रवाल) .. सं०१०-पृ०१४

१४३ - योग : एक विश्लेषण (डॉ० श्रीइन्द्रमोहनजी झा 'सच्चन',

१४४- रसखान-काव्यमें गो और गोपाल

पृष्ठ-संख्या



[40] विषय पृष्ठ-संख्या विषय १७३- संघर्षका कारण और वारण सं०९-पु०१५, सं०१०-पु०१७, सं०११-पु०१५, सं०१२-पु०१७ (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०९-पृ०८ १९० - साधन - सूत्र १७४- संतकी दुर्लभता और महत्ता (श्रीभँवरलालजी परिहार) . सं०२-पृ०३५ (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) ... सं०२-पृ०२६, सं०८-पृ०२५ १९१- साधनोपयोगी पत्र.. सं०२-पु०४३, सं०३-पु०४२, सं०४-पु०४३, १७५- संतवाणी सं०९-पृ०९ १७६ – संत बनो (सन्त श्रीरामचन्द्र केशव डोंगरेजी महाराज) ... सं०९-पृ०१९ सं०५-पु०४३, सं०६-पु०४४, सं०७-पु०४०, सं०८-पु०४४, सं०९-१७७– संन्यासका अर्थ पु०४२, सं०१०-पु०३७, सं०११-पु०४२, सं०१२-पु०३८ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) .. सं०११-पृ०३९ १९२-सार बात १७८- संवत्सरका प्रथम मास—चैत्रमास सं०४-पृ०४० (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ... सं०४-पृ०७ १७९- संसार-कूपमें पड़ा प्राणी [आवरणचित्र-परिचय] .. सं०११-पृ०६ १९३- सिद्ध सन्त श्रीवासुदेवानन्दजी सरस्वती [टेम्बे स्वामी] [सन्त-चरित] (श्रीगणेश वेंकटेशजी सातवलेकर) सं०४-पृ०२७ १८०- संसारमें मेरा कौन? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०२-पृ०१३ १९४- सुखके साधन (डॉ० श्रीतारकेश्वरजी मैतिन) सं०६-पृ०३० १८१ - सच्चा साधु सं०६ - पृ०१६ १९५- 'सुख' सम्पन्नताका मोहताज नहीं १८२- सतीका शाप [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) (श्रीताराचन्दजी आहूजा) सं०७-पृ०२२ [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०८-पृ०३९ १९६ - सुरसाका मुँह (श्रीओमप्रकाशजी पोद्दार) सं०६ - पृ०३७ १८३- सद्बुद्धिका अभाव १९७- सूडानमें गोमाताकी पूजा-अर्चना...... सं०१०-पृ०२७ (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०७-पृ०१० १९८- सूरकाव्यमें राधा (सुश्री डॉ० नीतू सिंहजी)....... सं०७-पृ०१८ १८४- सन्त टेऊँरामजीकी गंगाभक्ति १९९- स्नेह और रक्षाका पर्व-रक्षाबन्धन [प्रेषक—प्रेमप्रकाशी साधक] सं०४-पृ०२१ (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)...... सं०८-पृ०३० २००- स्वतन्त्र साधनके लिये प्रेरणा और उसका स्वरूप १८५- सरयुकी अवहेलना अक्षम्य [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)..... सं०४-पृ०३० (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) सं०६-पृ०३९ २०१ - स्वाभिमानके वास्ते [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) १८६ – सरलता और आनन्द (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल एम०ए०) .. सं०१० – पृ०२६ १८७- सर्वकल्याणकारी वेद [प्रेषक-श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०६-पृ०३८ (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) .. सं०८-पृ०१० २०२- हिंसाका कुफल (श्रीलीलाधरजी पाण्डेय) सं०११-पृ०३६ १८८- साधक कमलाकान्त (श्रीरामलालजी) सं०५-पृ०३९ २०३- हिन्दु संस्कृतिमें जलके प्रति पुज्य भाव (वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी) सं०१०-पृ०२३ १८९- साधकोंके प्रति—(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) .. सं०२-पु०१७, सं०३-पु०१७, सं०४-२०४- हे नाथ! हम तुम्हारे हैं (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी पृ०१४, सं०५-पृ०१८, सं०६-पृ०१८, सं०७-पृ०१५, सं०८-पृ०१९, श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०११-पृ०१० पद्य-सूची १- 'गंगाधर भगवान् शिव और गंगा' ९- माँ (श्रीरंधीरकुमारजी).....सं०५-पृ०२० १०- माँ (श्रीपुष्पेन्द्रसिंहजी रघुवंशी, बी०ए०, डी०एड०) ... सं०७-प०३५ (श्रीसतीशचन्द्रजी चौरसिया 'सरस') सं०८-पृ०११ २- 'जय गंगे तव वारि' (श्रीगंगालालजी मेहता) ११ – मानव जीवनकी धन्यता [प्रेषक—सुश्री चन्द्रिकाजी भट्ट] सं०३-पृ०४१ (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) सं०१२-पृ०१० ३- जय जय दशरथनन्दन! राम!! १२- 'मैं सेवक सीतापित मोरे' (पं० श्रीबाबुलालजी द्विवेदी, 'मानस मधुप', साहित्यायुर्वेदरत्न) सं०१०-पृ०१० (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय') .. सं०१२-पृ०२१ ४- जो धेनु आयी न होती (श्रीपारसनाथजी पाण्डेय) सं०५-पृ०१७ १३- राधा (श्रीशिवचरणजी चौहान) सं०१०-पृ०१६ ५- दीन गायें कह रही १४- रामकी कथा (डॉ० श्रीरोहिताश्वजी अस्थाना) सं०९-पृ०४० कविवर श्रीमैथिलीशरण गुप्त (भारत-भारतीसे).... सं०६-पृ०४२ १५- सङ्कीर्त्तनम् (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय') .. सं०७-पृ०३८ ६ - प्रलयंकरके प्रति (आचार्य श्रीरसिकविहारीजी मंजुल) . सं०९-पृ०१६ ७- 'बंदौ चरन सरोज तिहारे' (भक्त सूरदास) सं०९-पृ०१२ १६- सरस्वती-वन्दना (डॉ० श्रीगार्गीशरणजी मिश्र 'मराल') सं०२-पृ०१० ८- भगवान् श्रीकृष्णका नटवरवेश १७- हे मातु गंगे! (डॉ० श्रीरामनिवासजी पाठक) सं०७-पृ०२६ [प्रेषक—कार्ष्णि डॉ॰ श्रीराधेश्यामजी अग्रवाल] ... सं०३-पृ०३८ संकलित-सामग्री १- अहल्या-उद्धार...... सं०७-प०३ ७- भागीरथी-स्तुति..... सं०३-पृ०३ ८- मत्स्यावतार सं०११-पृ०३ २- गंगा सर्वसिरद्वरा..... सं०२-पृ०३ ३- जय जय जय गणपित गणनायक!..... सं०१२-पृ०३ ९- महारास-लीला सं०१०-पृ०३ १०- माता सारिका देवीसं०१२-पृ०२८ ४- 'दोउ चकोर, दोउ चंद्रमा'......सं०९-पृ०३ ५- प्रलयपयोधिमें मार्कण्डेयजीको भगवद्विग्रहका दर्शन.... सं०६-पु०३ ११- मैयाकी सीखसं०५-पृ०३ १२- श्रीकृष्णकी गोकुल-यात्रा.....सं०८-पृ०३ ६- 'भए प्रगट कृपाला'..... सं०४-पु०३